महावीर दर्शन महाजीवनकथा

॥ महावीर स्वामी! नयनपथगामी भवतु मे ॥

*

कल्याणपादपारामं श्रुतगंगा हिमाचलम् ।
विश्वाम्भोज रविं देवं वन्दे श्री ज्ञातनन्दनम् ॥

(सूत्र-ध्वनि) "जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ ।" जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ॥ (आचारांग : 1/2)
= जो 'एक' को — आत्मा को — 'जान लेता है, वह सब को, सारे जगत् को जान लेता है"

*

(मंत्र-ध्वनि) ॐ नमो अरिहंताणं । नमो सिद्धाणं ।
नमो आयरियाणं । नमो उवज्झायाणं । नमो लोए सव्व साहूणं ।
एसो पंच नमुक्कारो । सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं । पढमं हवइ मंगलम् ॥

(प्रवक्ता M) अनादिकाल से चला आ रहा है यह मंत्र-नमस्कार महामंत्र : व्यक्ति को नहीं, गुणों को पूजनेवाला विश्व-कल्याण का महामंत्र । अरिहंतपद सिद्धपद की पूजना के द्वारा स्वयं को अरिहंतपद–सिद्धपद–परमात्मपद दिलानेवाला महामंत्र.... पंच-परमगुरुओं में निहित आत्मतत्त्व-केन्द्रित महामंत्र ।

(प्रवक्ता F) – इस महामंत्र की आराधना, ध्यान-साधना एवं तदनुसार आचरणा — सम्यक् दर्शन–ज्ञान–चारित्र की रत्नत्रयी उपासना — एक महान आत्मा ने की थी : एक नहीं, दो नहीं, सत्ताईस सत्ताईस जागृत जन्मान्तरों में...! सत्ताईस भव — नयसार और ऋषभदेव-पौत्र मरीची से लेकर वर्धमान महावीर तक ।

(प्र० M) – और इतनी सुदीर्घ साधना के पश्चात्, आज से ठीक 2610 वर्ष पहले, ईस्वी पूर्व (598) पांच सौ अट्ठानवे में —

(प्र० F) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की कर्मभूमि .... बिहार की संपन्न वैशाली नगरी .... उसी का एक उपनगर क्षत्रियकुंड-ग्राम और उसी में स्थित एक राजप्रासाद —

(प्र० M) तेईसवे जैन तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के धर्मावलंबी एवं लिच्छवी वंशी राजा सिद्धार्थ का यह राजमहल .... । यहाँ पर राजमाता त्रिशलादेवी की पवित्र कुक्षि में उस भव्यात्मा का देवलोक से अवतरण हुआ है — महामंगलकारी चौदह सर्वोत्तम सांकेतिक स्वप्नों के पूर्वदर्शन के साथ । (दिव्य वाद्यसंगीत : Celestial Instrml. Music सूर० संतूर)

(प्र०F) मति, श्रुत एवं अवधि इन तीनों ज्ञान से युक्त यह भव्य करुणाशील आत्मा गर्भावस्था में भी अपनी माता की सुख-चिन्ता एवं सुख-कामना का संकल्प करती है~

(प्र०M सूत्र) "माता-पिता के जीवनकाल तक मैं दीक्षा ग्रहण न करूंगा।" -कल्पसूत्र

(प्र०M) — इस प्रकार इस पहली चिंता में प्रभु जन्मपूर्व ही माता-पिता के जीते जी दीक्षा नहीं ग्रहण करने की प्रतिज्ञा कर अपनी मातृ-पितृ भक्ति स्पष्ट करते हैं।

(प्र०F) — और यहाँ माता त्रिशला भी गर्भवती माँ के लिये समुचित, उत्कृष्ट आचारधर्म का पालन करती है। इस में एक आदर्श माता के लिये उचित ऐसा शील, संस्कार, आरोग्यमय जीवन जीते हुए, एक महान् शिशु के निर्माण का आदर्श मार्ग प्रस्तुत किया गया है। वह अद्भुत सर्वोपकारक, सर्वकालीन एवं सर्वदेशीय है।... माँ क्या खाये कैसे चले-उठे-बैठे, कैसे वस्त्र धारण करे, कैसे सोये, कैसे बोले और किस प्रकार प्रसन्नचित्त होकर शाँत, धर्मध्यानमय जीवन बीताये, इत्यादि दैनिक व्यवहार के पालन करने योग्य नियम यहाँ बताये गये हैं।

(प्र०M) — इस प्रकार "जयं चिट्ठे जयं चरे" के विवेकयुक्त गर्भावास के नौ मास साड़े सात दिन पूर्ण होते हैं और आता है वह दिन — वह दिन है चैत की चाँदनी की तेरहवीं तिथि — चैत्र शुक्ला त्रयोदशी। शुक्लपक्ष की इस चाँदनी में शुक्लध्यान-आत्मध्यान - आत्मस्वरूप में खो जाने के लिये अपनी समग्र आत्मसिद्धि को पाने के लिये, चन्द्रवत् निर्मल, सूर्यवत् व्याप्त, सागरवत् गंभीर प्रभु की महान चेतना स्व-पर हिताय जन्म (धारण करती है) लेती है।

(गीत M) (Soormandal + Sitar : Musical Instruments : वाद्य मध्यांतर नीनीनीनी सानी रे रे - | पप मपपरे सारेसानी -)

(1) "पच्चीस सौ बरसों पहले एक तेजराशि का जन्म हुआ। युगयुग का अंधकार मिटाता, ओले भव्य रवि चमका।
(सा ध धधध मगमपपप - | धधधध प | परेसारेनी)
"कोकिल मोर करे कलशोर, वायु बसन्ती बहता रहा, क्षत्रियकुंड में माँ त्रिशला को पुत्र पवित्र का जन्म हुआ।"

(2) (रासगान) (Beam change : Guj. folk tunes..) "क्षत्रियकुंड में प्रकट भये, माता त्रिशला देवी के नंद रे धन्य महावीर प्रभु! भवभव से साधन करके लाये, साथ मति-श्रुत-अवधि ज्ञान रे धन्य महावीर प्रभु!" — (नरेश)

(प्र०F) राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिशला के नंदन 'वर्धमान' के जन्म का यह आनंदोत्सव, यह 'कल्याणक', सभी मनाते हैं — ऊर्ध्व मेरु पर्वत पर देवतागण और यहाँ (अधर) धरतीलोक पर राजा सिद्धार्थ एवं उनके प्रजाजन (Rhythm + Soormandal)

(वृंदगान) (राग - बसंत बहार, केदार; ताल - त्रिताल)
(सासामगप, पनीसरिं, सां धप, धनीधप | पपपप प सांप, परेसा) वाद्य-मावप

"घरघर में आनंद है छाया, घरघर में आनंद।
त्रिशला मैया पुत्र पधारिया, जैसे पूनम का चंद॥ घर घर में०"
(पपप सा-सा | सां सां सां | नीरेसा | रारं | सांग रेमं गरें | सां-धप)
(सासामग | प-नीसारें | सां-धध॥ धनीधप | पपपप | प-सां।) ॥सा-म-सा)
(म--ग | प-रेसा | सासामग | प-नी-सा-म)
"गौरव ओस में दीप जले हैं केसर कुमकुम रंग खिले हैं।
धरती के गूढ़ अंतस्तल से, प्रसरित धूप सुगंध...॥ घरघर में॥
"कुंज कुंज कोयलिया बोले, मस्ती में मोरलिया डोले।
मंजुल कंठ से, मीठे स्वर से, गायें विहग के वृंद...॥ घर घर में॥ (Soormandal)

(प्र० M) — और इस महामंगलकारी जन्मकल्याणक के पश्चात ~

(गीत M) (राग - मिश्र पीलू, ताल - दादरा : धधध-नीसा नीसा | नीसानीधप | पपप धनी धप धनीनी नानाना)

"बाल को करती प्यार दुलार माँ, झुले की डोरी खींचती थी;
सुर मधुर सुनाय सुनाय के, अंतस-अमृत सींचती थी।
(रेरेरे गरेसा | रमम धपप - गगग मधप ममम
धप-पम धधध | मपपप धधध नीसासा | नी सासासासा)
"वीर होना, गंभीर होना तू!" पुत्र को आशिष देती थी,
झुकेझुके के निज लाल के लोचन, नेह नजर से देखती थी॥"
(रेरेरे गरेसा, रमम धधप - गगग मधप ममममम - 2)

(लोरी गीत) (वाद्यस्वर परिवर्तन : पहाड़ी छाया, ताल-दादरा)
(F)(1) "सो जा रे - सो जा।...सो जा...| ओ मेरे बाल/लाल...!
मीठी मीठी लोरी सुनाऊं, मैं तो तेरे काज,
जागने का शेष तुझे रे, सो जा रे तू आज। सो जा रे।" (Soormandal)

(लोरी गीत)
(F)(2) "तुम सो जाओ! ...मैं गाऊं, तुम सो जाओ, सो जाओ।
मुझ को सोते युग बीते, तुम को यों लोरी गाते,
अब आओ मैं पलकों में, स्वप्नों से सेज बिछाऊं।
तुम सो जाओ! (२)
क्यों जीवन के शूलों में, प्रतिक्षण आते जाते हो?
ठहरो सुकुमार! गलाकर मोती पथ में फैलाऊं।
तुम सो जाओ! (२)
(- महादेवी वर्मा : 'नीरजा' : आधुनिक कवि 70)

(प्र.M) त्रिशला मैया ने तो सुलाया अपने सुकुमार वीर को पथ में शूलों के स्थान पर फूलों और मोतियों को बिछाकर! ...पर वह कहाँ सोनेवाला था? ....वह तो जागने और जगानेवाला था सब को, सारे जग को, यह आह्वान सुनाकर कि — (घोष.M) "जं जागरुका उपयोगवंता। उपयोगवंता खलु अप्पवंता।" ... "उट्ठिए! मा पमायए! ...समयं गोयम! मा पमायए!!"
"हे जीवो! छोड़ प्रमाद और जाग्रत हो जा!! अन्यथा रत्नचिंतामणि सम यह मनुष्यदेह निष्फल जायगा.....!!! (- श्रीमद् राजचन्द्र : वचनामृत)

(प्र.F) वर्धमान के जन्म से ही "श्री" एवं "आत्मश्री" का वर्धन, उनका विद्याशाला में गमन और वहाँ इन्द्र का आगमन... इन्द्र की प्रश्नपृच्छा से पंडितगुरु का धन्य बनना, 'जैनेन्द्र व्याकरण' का सृजन होना और......और अपने अलौकिक बाल-पराक्रम से 'वर्धमान' से 'महावीर' नामकरण होना : चल पड़ा यह क्रम ~ ।

(प्र.M) एक [illegible] बात है। इस नामकरण का निमित्त बना आमलकी क्रीड़ा का बाल-खेल प्रसंग। उसकी पराक्रम-गाथा सुनाने वर्धमान के बालमित्र पहुंचे हैं माता त्रिशला के पास ~

(बाल वृंदगीत) (राग - भीमपलासी ; ताल - दादरा)

"ओ मैया! तेरे कुंवर की करनी क्या बात ?
ओ त्रिशला! तेरे कुंवर की करनी क्या बात ?
सब से निराली उसकी जात, भली है उसकी भाँत,
ओ मैया! तेरे कुंवर की करनी क्या बात ?
"एक दिन सभी मिल के हम खेल खेलते थे,
सुख-दुःख के दाव-दाव संग झेलते थे।
निकला अचानक साँप एक महाकाय,
देखते ही (उसे) सभी हम भागते चले जायँ...
बोलते हुए — 'बाप रे बाप!'
"पर तेरे लाडले ने दौड़ पकड़ा उसे,
रस्सी समान फेंक छोड़ रक्खा उसे, पर काँपा न उसका हाथ!
ओ मैया! तेरे कुंवर की करनी क्या बात ?"

(प्र.M) साँप बने हुए उस देवता ने फिर थककर क्या किया?

(Horror Sound Effects : भयदर्शक वाद्य)

(गीतपंक्ति-काव्यपाठ) "रूप 'पिशाच' का लेकर देवता, वीर को पीठ बिठार लियो
नन्हा-सा बहादुर बाल कुमार, उस देव की मुट्ठी लगाय दियो।"

(समूह)

(प्र.F) साँप-पिशाच-दैत्य और दूसरे प्रसंग में पागल हाथी — सभी को अपने बाल-पराक्रम से कुमार वर्धमान वश करते रहे.....

(गीतपंक्ति-समूह) "ए.....हाथी, सर्प, दैत्य को क्षण में भगाया, सिखाये अभय के पाठ रे... धन्य महावीर प्रभु! क्षत्रियकुंड में प्रकट भये।"

(प्र.M) बाल-किशोर-कुमारावस्था बीत चुकी.....युवा आई... भीतर से वे अलिप्त हैं, परन्तु 'भोगावली' कर्म अभी कुछ शेष हैं, माता-पिता के प्रति भक्ति-कर्तव्य अभी शेष हैं, यशोदा का स्नेह-ऋण अभी बाकी है। (Background)...और—

माता, मातृआज्ञा, कुमार राजकुमार वर्धमान के सन्मुख ले आते हैं — यशोदा को!..... यशोदा — समरवीर राजा की यश-दात्री, धन्या सुपुत्री...

(प्र.F) — जिस के गर्भागमन से ही पिता राजा को युद्धविजय और यश प्राप्त हुए और जो शायद त्यागी बननेवाले पति वर्धमान के भावी कर्म-युद्ध में भी 'पथ-बाधा' नहीं, अवरोध-अंतराय नहीं, यश-प्रदाता ही बननेवाली थी, ऐसी यशोदा'....!

(प्र.M) — जिस की अंतर्व्यथा की कथा, आगे संकेत करेंगे उस प्रकार, शायद किसीने नहीं लिखी....!

(प्र.F) इस यशोदा का पाणि-ग्रहण करवाने वर्धमान कुमार के पास पहुंचे हैं माता त्रिशला।

(प्र.M) मातृ-आग्रह, मातृ-आज्ञा, गर्भावास में स्वयं की हुई मातृ-पितृ भक्ति-प्रतिज्ञा और दूसरी ओर से भवसंसारभ्रमण-भय विचार — दोनों पहलुओं के गहन चिंतन के पश्चात् वर्धमान एक निर्णय पर पहुँचते हैं। मातपिता के सुखहेतु भी और अपने भोगावली कर्म निःशेष करने हेतु भी वे स्वेच्छा से यह निर्णय करते हैं — विवाह हेतु (संदर्भ: 'त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित्र')

(प्र.F) — और राजकुमार वर्धमान महावीर यशोदा का पाणिग्रहण करते हैं, उससे विवाह करते हैं। यद्यपि दूसरी मान्यतानुसार वे अविवाहित कुमार ही रहते हैं।....इस गृहस्थाश्रम में, वैभवपूर्ण गृहस्थाश्रम में भी वे जीते हैं अपने उस जलकमलवत् जीवनादर्श के अनुसार —

(प्रतिध्वनि घोष M)

"जल में, कीच में जन्म लेकर भी जैसे जल से कमल अलिप्त रहता है, वैसे ही संसार के बीच रहते हुए भी आत्मार्थी को संसार-वासना से अलिप्त रहना है।" (sootmandal)

(गीतपंक्ति M)

"वैभव में वह बसते हुए भी, जलकमल की भाँति रहे;
भोगी होकर भी योगी की भाँति, रागी होकर भी विरागी रहे।"

(प्र.F) — इसी आदर्श के अनुसार, भोग को रोग की भाँति भुगतकर, बीत रहे उनके गृहस्थाश्रम के दौरान उनके घर पुत्रीरत्न 'प्रियदर्शना' का खेलना, गृहीधर्म निबाहते हुए पत्नी-पुत्री को स्वयं के भावी विरागी जीवन को लक्ष्य कर धर्म-मार्ग पर सुदृढ़ और तैयार करना.... और माता-पिता का स्वर्ग सिधारना — इन सभी अनुकूल-प्रतिकूल घटनाओं में भी महावीर का आत्मचिंतन निरंतर चलता रहता है —

(प्रतिध्वनियुक्त गीतपंक्ति)

(M) "मैं कौन हूँ? मैं कौन हूँ? कोऽहम्? कोऽहम्? मैं कौन हूँ?
आया कहाँ से? क्या स्वरूप है मेरा सही? मैं कौन हूँ?

(—श्रीमद् राजचंद्रजी: 'अमूल्य तत्त्वविचार')

(हुं कोण छुं? क्यांथी थयो? शुं स्वरूप छे मारुं खरुं? हुं कोण छुं?)

(प्र.F) तीव्रता पकड़ते हुए इस आत्मचिन्तन के प्रत्युत्तर में उन्हें लंबे अर्से से पुकारती हुई वह आवाज (भीतर से) सुनाई देती है, वह आवाज, वह कि जिस में एक मांग है, एक बुलावा है, एक निमंत्रण है —

(प्रतिध्वनि घोष M) "जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ।" जो एक को, आत्मा को जान लेता है, वह सबको, सारे जगत को जान लेता है.....। आ, और अपने आप को पहचान, अपने आप को पा...।" (Soormandal : Celestial Music) (Instrumental Echoes)

(प्र०F) — और इसे ... के तड़प उठे हैं। उनकी छटपटाहट जाग उठी है। इस आवाज़ का वे उत्तर देना चाहते हैं, अपने को खोजना और सदा के लिए पाना चाहते हैं —

(प्र० M) ना, वैशाली के राजमहल में अपनी इस आत्मा को पाया नहीं जा सकता....! (Soormandal)

(प्र०F) और इस के लिए एक ही मार्ग था — "सर्वसंग परित्याग"... भीतरी भावदशा से भरे इस वीरोचित सर्वसंग परित्याग के अवसर की ताक में वे तरसते रहे.....

(प्रतिध्वनि गीत M)

"अपूर्व अवसर (2) ऐसा आयेगा कभी?
कब होंगे हम बाह्यांतर निर्ग्रंथ रे?
सर्व सम्बन्ध का बंधन तीक्ष्ण छेदकर,
कब विचरेंगे महत्पुरुष के पंथ रे? अपूर्व०"

(F)

"अपूर्व અવસર એવો ક્યારે આવશે?
ક્યારે થઈશું બાહ્યાંતર નિર્ગ્રંથ જો;
સર્વ સંબંધનું બંધન તીક્ષ્ણ છેદીને,
વિચરશું કવ મહત્પુરુષને પંથ જો!"

(—श्रीमद् राजचन्द्रजी। अनुगुंजित ...)

(प्र० M) और लोकान्तिक देवों की स्तुति एवं वर्षभर के अपरिमित दान के बाद अंतमें आया वह दिन — अपने को पहचानने हेतु जाने का, सर्वसंग परित्याग के — महाभिनिष्क्रमण के — भागवती दीक्षा के — 'अपूर्व अवसर' का....। (Soormandal) वह अति विस्तृत, अति विशाल 'चन्द्रकांता' शिबिका और वह अष्टमंगलादि युक्त विराट शोभायात्रा उनके दीक्षाकल्याणक की! (Celestial Music)

(प्र० F) पलायन से नहीं, क्षमा, समझौता और स्नेह से ली गई इस भागवती दीक्षा के समय ही जन्मजात तीन ज्ञानवाले वर्धमान महावीर को चौथा (मन वाले जीवों के मनोभावों को जाननेवाला) "मनःपर्यव ज्ञान" उत्पन्न हुआ और वे चल पड़े अपनी आत्मा को दिलानेवाले पंचम ज्ञान और पंचम गति मोक्ष को खोजने — अनंत, अज्ञात आत्मपथ पर : एकाकी, अकेले, असंग....। (Soormandal)

(प्र० M) (प्रभु वीर के) इस सर्वसंग परित्याग के समय, पत्नी-पुत्री की अंतर्दशा कैसी रही होगी?.....उनके भीतर कैसे भावांदोलन उठे होंगे? वनवासी लक्ष्मण की 'उपेक्षिता ऊर्मिला' और महाभिनिष्क्रमण कर गये गौतम बुद्ध की 'विरहिणी यशोधरा' से तो महावीर की इस अर्धांगिनी यशोदा के मनोभाव ऊँचे ही उठे होंगे?...अन्य चरित्र-लेखकों-कवियों का कम, किन्तु हमारे साथ, हमारी ही भाँति एक सहृदय मर्मी कवि का तो इस ओर कुछ ध्यान गया है और उन्होंने इन भावों की प्रश्न-वाचा दी है —

(प्र.F) नारी-उद्धारक वीर प्रभु ने अपनी ही अर्धांगिनी के लिए क्या कुछ तो सोचा होगा? वास्तव में क्या महावीर के महाजीवन के निर्माण में यशोदा का मूक योगदान कम था?

(प्र.M) या "मैं देहादि स्वरूप नहीं और देह, स्त्री, पुत्रादि कोई मेरे नहीं" -ऐसी स्पष्ट, तीक्ष्ण आत्मभावना से राग-द्वेष के पुष्पवत् कोमल बंधनों को काटा होगा?.... समूचे संसार में नायक रूप ऐसी रमणी को उन्होंने 'केवल शोकस्वरूप' समझकर त्यागा होगा?

(आलाप गानपंक्ति M) "સઘળા આ સંસારમાં રમણી નાયકરૂપ,
એ ત્યાગી ત્યાગ્યું બધું, કેવળ શોકસ્વરૂપ." (श्रीमद् राजचंद्र)

(प्र.F) परंतु स्वयं यशोदा जैसी समुन्नत अर्धांगना ने तब क्या सोचा होगा?

(काव्यगान M) "जिस दिन महावीर ने स्वयं ही त्यागी बनने का कहा होगा,
देवी यशोदा! दिल में आपके, उस वक्त क्या हुआ होगा? xxxxx
(क्या) कभी भी आपको ख्याल आया था, कि पति के साथ में जाउं?
नेम के पीछे राजुल चली थी, ऐसी रीत निभाउं....?
या नन्ही-सी बिटिया ⊛ खातिर, घर में रहना पड़ा होगा? (⊛ प्रियदर्शना ⊛)
कोई न जाने देवी! आप की होगी कैसी समस्या?
महान त्यागी पति के पीछे, होगी कैसी तपस्या?
अबोल है इतिहास आपका, क्या क्या आप को हुआ होगा?
कथा क्या आप पर बीता, गुजरा होगा?"
(—श्री. शांतिलाल शाह : स्तवन मंगल : 42)

(प्र.F) उक्त द्रष्टा कवि ने तो जिनशासन की सन्नारियों में त्रिशला-देवानंदा दोनों के साथ यशोदा को भी यह अंजलि दी है ~

(कवित्त) "त्रिशला-देवानंदा दोनों प्रभु 'वीर' की माता
शासन के इतिहास में दोनों का नाम अमर हो जाता।
ब्राह्मण-क्षत्रिय जाति वंश के संस्कार (प्रत्येक) भरनेवाली,
वीर की पत्नी देवी यशोदा, जिसने नाम उजाला;
पति के सुख के खातिर जिसने, अपना सुख बिसारा,
आत्मविलोपन की यशोगाथा, यशोदा लिखनेवाली ......'
(—श्री. शांतिलाल शाह : स्तवन मंगल : 20)

(प्र.F) —पर आत्मलीन प्रभु वीर तो अपने निर्धारित सर्वसंगपरित्याग-पथ पर प्रस्थान करने ~

(गान M) "साँप की कैंचुलि माफ़िक एक दिन, इस संसार का त्याग कर।
राजप्रासादों में रहनेवाला, जंगल जंगल वास कर ॥"
(Pathetic Instrumental Music : Raga Shivaranjani)

(प्र.F) उनकी इस हृदयविदारक विदा की वेला, इस 'ज्ञातखंडवन' की वाटा में खो जाते हुए उनको देखकर पत्नी यशोदा, पुत्री प्रियदर्शना (करुण ध्वनि) एवं बंधु नंदीवर्धन के विरहवेदना से भरे विलाप-स्वर गूंज उठे ~
(BGM: pathetic Music)

(गीत: करुणतम श्लोक : M)

"त्वया विना वीर ! कथं व्रजामो
(प्र॰M)
गोष्ठिसुखं केन.....सहाचरामो ?..."

"हे वीर ! अब हम आप के बिना शून्यवन के समान घर को कैसे जायें ? हे बन्धु ! अब हमें गोष्ठि-सुख कैसे मिलेगा? अब हम किस के साथ बैठकर भोजन करेंगे ?"

(प्र॰F) — लेकिन निर्ग्रंथ, निःसंग, निर्मोही महावीर तो चल पड़े हैं — प्रथम प्रस्थान से ही यह भीषण भीष्म-प्रतिज्ञा किए हुए कि —

(सूत्रघोष प्रतिध्वनि M) "बारह वर्ष तक, जब तक मुझे केवलज्ञान नहीं होगा, तब तक न तो शरीर की सेवा-सुश्रूषा करूंगा न देव-मानव-तिर्यंच के उपसर्गों का विरोध करूंगा, न मन में किंचित मात्र उद्वेग भी आने दूंगा।" (-श्री कल्पसूत्र)

(प्र॰F) (thrilling Instrumental Effects)

यहीं से शुरू हो रही इन सभी भीषण प्रतिज्ञाओं की कसौटी-रूप उनकी साढ़े बारह वर्ष की आत्म-केन्द्रित साधनायात्रा — जिसमें इन्द्र तक की सहाय प्रार्थना भी अस्वीकार कर के, और भी भीषण प्रतिज्ञाएं जोड़ते हुए, वे आगे चले..... (soormandal: Cloud Burst, Beast-Roaring, Forest-Horrors' Effects...)

(सूत्रघोष प्रतिध्वनि M) "अब से अप्रीतिकर स्थान में नहीं रहूंगा। सदा ध्यान-लीन रहूंगा। सदा मौन रहूंगा। हाथ में ही भोजन करूंगा और गृहस्थों का विनय नहीं करूंगा।" (-श्री कल्पसूत्र)

(Forest Effects contd.)

(गीत : शिवरंजनी + अन्य M) "घोर वनों में पैदल घूमे (F) पैरों में लिये लाली।
(F) मान मिले, अपमान मिले था देवे भले कोई गाली।
(M) पंथ था उस का जंगल-झाड़ी.....कंकर-कंटक वाला..
(F) कभी कभी था साथ में रहता मंखलीपुत्र गोशाला ॥"

(वन में निर्भय यात्रा पदध्वनि : Horror & Rain Clouds Lightening Effects)

(गीत: स्वरपरिवर्तन : M) (ताल-दादरा)

"आफत और उपसर्ग की सेना पद पद उसे पुचकारती थी,
आँधी-तूफाँ और मेघ-गर्जन से कुदरत भी ललकारती थी।
"दुःख से कभी न डरनेवाला, उल्टे दुःख को डराता था।
सुख की शीतल छांव को छोड़कर, आग में कदम धरता था।
"पहाड़ों के पहाड़ टूटने पर भी, निश्चल हो धीर धरता था,
सहायता को इन्द्र आये तब, उसको भी विदा करता था।
"घोर भयानक संकट के बीच आतम-साधना चलती थी।
ज़हर हलाहल को पी जाकर, औरवियाँ अमृत झरती थी ॥

(Voice & Instrumental Change)

(गीत: स्वरपरिवर्तन : F)

"प्रेम की पावन धारा निरंतर, पापी के पाप प्रक्षालती थी।
मैत्री-करुणा की भावना उसकी, ख्वते बेड़े उबारती थी"॥

(गीत: स्वरपरिवर्तन : M : करुणा-वेदना- करुण मुरली स्वर : दृढ़ वज्र नाद : S.F.)

"चंडकोशी जैसे भीषण नाग को बुझाने वीर विहार करे।
जहर भरे कई दंश दिये पर, वे तो उससे प्यार करे॥"

(प्र॰F) दृढ़भूमि के पेढ़ाल उद्यान में संगमक देव के छह माह तक बीस प्रकार के घोर भयंकर मरणांत उपसर्ग....!

(गीत : M : contd)

"होश भुला एक ग्वाला भले ही कानों में कील मार चले।
(Forest Animals Effects) आतमभाव को जाननेवाला, देह की ना परवाह करे।" (शिवाज)
"देव और दानव, पशु और मानव प्राणी उसे कई डँस रहे।
हँसते मुख से महावीर फिर भी, मंगल सब का चाह रहे॥"

(प्र॰F) —ऐसे घोर उपसर्गों और कष्टों-परिषहों से भरी लम्बी साधनायात्रा बाह्यांतर निर्ग्रन्थ पुरुषार्थी महावीर ने आत्मभावना में लीन होकर छोटी कर दी और आनंद से भर दी... (Vibra Sound)

(प्र॰M) — हाँ, भीतर में परिस्थिति-प्रभावविहीन, प्रतिक्रिया-प्रतिभाव-विहीन, आनंद भरा सजग शुद्धात्मध्यान : बाहर कैसे-कैसे कितकितने घोर उपसर्ग-परिषह....! कैसे कैसे प्रतिमा-ध्यान-मय कायोत्सर्ग....!! कैसे कैसे मौन-ध्यान की सुदीर्घ धारा के अभिग्रह—महाभिग्रह....!!!

(प्र॰F).....उनके घोरातिघोर तप भी इस गहन आत्मध्यान से सहज ही निकले....उनके विहार-महाविहार भी इसी धुन में चले.....उनके स्वल्प आहार भी अभिग्रहों की पवित्रता-शुचिता में पले और ढले....।

(प्र॰M) —सर्वत्र एक परम समता, प्रशमरसपूर्ण प्राणपराग की प्रसन्न प्रफुल्लितता, तीनों समितियों की अद्भुत सजगता और सर्व जीवों के प्रति बहती निष्कारण करुणा-शीलता !!

(प्र॰F) आहार का जय, निद्रा का जय, आसन का जय —। —साधनामार्ग के ये तीन प्राथमिक जय....!

(प्र॰M) —प्रभु ने साढ़े बारह वर्ष की इस सुदीर्घ साधनायात्रा में — आहार भी कितना लिया ?
— निद्रा भी कितनी ली ?
— आसन भी कितने दृढ़ लगाये रखे ?
कायोत्सर्गमय खड्गासन — ध्यानमय पर्यंकासन
देहनिश्चलप्रभरा, केवलज्ञान-प्रदाता गोदोहिकासन....!

(प्र०F) — इन सभी के बीच उनकी भीतरी लौ लगी रही—

(गान M) " इस तन का दीया करुं, बाती मेलुं जीव;
लोही सींचुं तेल ज्युं, कब मुख देखुं पीव?
(-कबीर)

"मनसा प्याला, प्रेम मसाला, ब्रह्म-अग्नि परजाली,
तन-भाठी अवटाई पिये कस (तब) जागे अनुभव लाली ||"
(-आनंदघनजी)

(प्र०F) तन-भाठी को जलाकर के, मन के दीप को प्रज्वलित करके, यह आत्म-ध्यान की अगन प्रभु ने जलाई थी, एक अखंड लौ अंतस में लगाई थी.....

(प्र०M) तब कहीं प्रकट हो रही थी उनकी आत्मानुभूति की लाली, 'अभय-अद्वेष-अखेद' भरी खुशहाली, गहरे अंतस्-सागर से निकले इन आनंद-रत्नों और मोतियों की थाली!

(गान: F:CH:M) "शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम |
और कहें क्या, कितना, ध्यान लगाय निजठाम ||"
(-आ०सि० 117)

" શુદ્ધ બુદ્ધ ચૈતન્યઘન, સ્વયં જ્યોતિ સુખધામ,
બીજું કહીએ કેટલું, કર વિચાર તો પામ." (आ०सि० 117)

(प्र०F) — (परंतु) निजधाम का उनका यह ध्यान कोई 'ख्याल का खेल' नहीं था | बातों का, शुष्कज्ञान भरा, कोरा अध्यात्म नहीं था—|

(प्र०M) — वह तो संतुलन और संमिलन था निश्चय और व्यवहार का, उपादान और निमित्त का | इसी स्वस्थ, समन्वित भाव से वे सदा, सर्वत्र, सभी सानुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच से, अपने इस स्वयंज्योति आनंदधाम-निजधाम का ध्यान लगाते हुए, उसी ध्यानदशा में रहते हुए निहारते रहे, देखते रहे, दिखलाते रहे केवल एक आत्मा को, सहजात्मा को, शुद्धात्मा को, सिद्धात्मा को! सभी साधनाओं के बीच, सभी विचरणों के बीच बस एक ही लौ, एक ही रटना, एक ही संज्ञान: आत्मा... आत्मा... आत्मा...!

(गान: S:CH) " मैं तो आत्मा हूँ, जड शरीर नहीं |" (सहजानंदघनजी: अभिवक्तव्य)
" હું તો આત્મા છું, જડ શરીર નથી."

"हम ऐसे देश के/आतम-देश के वासी हैं, जहाँ राग नहीं और द्वेष नहीं,
जहाँ मोह नहीं और शोक नहीं, जहाँ भेद नहीं और खेद नहीं;
जहाँ भरम नहीं और चाह नहीं हम ऐसे देश के वासी हैं/ध्यानदेश के वासी
इस देश के सिर्फ प्रवासी हैं, हम सिद्धदेश के/महाविदेह के/सिद्धालय के/सिद्धलोक के/
सिद्धशिला के वासी हैं, हम आतमदेश के वासी हैं — सिद्धालय देश के वासी हैं ||"
(संकलित)

(प्र०F) जिस आत्मप्रदेश में, आत्मलोक के जिस ऊर्ध्वाकाश में अप्रमत्तरूप से प्रभु विहार-संचार कर रहे थे, जिस आत्मा को पहचानने, और संपूर्ण समग्रता में पाने के लिये वे चले थे, वह अब करीब करीब उनकी पहुँच के भीतर ही था—
(Dhom Instrumental)

(सूत्र प्रतिघोष : गान) "सच्चिदानंदी शुद्ध स्वरूपी, अविनाशी मैं आत्मा हूँ (२)"
"हम मगन भये निजध्यान में" ।

(प्र. M) – यह वही भाव था, वही ध्यान का स्रोत था, जिसकी अतल गहराईयों से वे कष्ट-सहन के, क्षमा के एवं निरपेक्ष स्नेहकरुणा के अनमोल मोती ले आये थे (Sound of Sea waves.)

(प्र. F) अन्यथा ऐसे घोर कष्ट, परिषह और उपसर्ग वे कैसे सह सकते थे?

(प्र. M) ऐसी कठोर, सुदीर्घ साधना वे आनंदमय कैसे बना सकते थे?

(प्र. F) वे तो डूबे रहे, खोये रहे – बिना किसी विकल्प के, बिना विश्राम के अपने विशुद्ध आत्मध्यान में –

(प्र. M) – खड़े हुए भी, बैठे हुए भी, चलते हुए भी – सर्वत्र सजग, सर्वत्र अंतरस्थित, सर्वत्र उपयोगवन्त – 'जयँ चिद्द्, जयँ चरे...!'

(प्र. F) विशुद्ध आत्मध्यान – घोरातिघोर उपसर्गों के बीच आत्मध्यान – जिसमें :–

(गान M) "एक परमाणुमात्र की मिले न स्पर्शना, पूर्ण कलंकरहित अडोल स्वरूप जो; शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय, अगुरु-लघु, अमूर्त, सहजपदरूप जो ।" (श्रीमद् राजचंद्रजी : अपूर्वअवसर)

(प्र. M) ऐसे उपसर्गों – परिषहों – तपस्याओं के साथ साथ चले और पले ध्यान को मानव इतिहास ने एक ही साथ | और इतनी संख्या में न कहीं देखा है, न सुना, न दर्शाया! बेजोड़, अद्वितीय, अनुपमेय, अभूतपूर्व !! (अक्षय धारावाह)

(प्र. F) बाहुबली, गजसुकुमाल महामुनि, स्कंधक मुनि, आदि आदि के ऐसे घोर उपसर्गमय ध्यान भी थोड़े ही या अल्पावधि के ही! (क)

(प्र. M) दिल दहल उठता है, रोंगटे खड़े हो जाते हैं, अभूतपूर्व अतिवीर – महावीर के उन घोरातिघोर उपसर्गों, सतत लगातार ध्यानों और अखंड तपस्याओं ('वीरस्य घोरं तपो...') का स्मरण भी करते हुए!

(पूर्व कथा) (प्र. F) – शूलपाणि यक्ष के रातभर के उत्पातों – उपसर्गों और पुनः के प्रभात-काल के १० स्वप्नों! (+ पूर्वकथा)

(प्र. M) – चंडकौशिक के दंशोपसर्ग बीच "बुज्झ, बुज्झ!" के माधुर्य द्वारा जन्मांतरों की जाति-स्मृति का उसे प्रदान।

(प्र. F) – चोराक के पहरेदारों, राढ़ देश के अनार्य लोगों, कूपय के ग्रामजनों के प्राणांत कष्टों.....!

(प्र. M) – दृढ़भूमि के पेढ़ाल उद्यान में संगमक देव के, मेरु को भी तोड़नेवाला (का) स्वरघात, कालचक्र, पवनवातचक्र एवं सिंहादि के २० बीस उत्कृष्ट मरणांत उपसर्गों....!!

(प्र. F) – लाटदेश में कठिन कर्मों को तोड़नेवाले हिलना के उत्पातों

(प्र. M) – शालशीर्ष ग्राम में ध्यानमध्ये त्रिपृष्ठभव की अपमानित रानी कटपूतना (लोकावधिज्ञान प्रकटा) व्यंतरी के शीतजल उपसर्गों | ग्वाले द्वारा छह मास अंतर रहे कानों में ठोके गये – शरकट वृक्ष कीलों!

(प्र॰ F) – सुभटों द्वारा ध्यानस्थ प्रभुचरणों में अग्निज्वालाओं और कृतघ्नी गोशालक द्वारा छोड़ी गई तेजोलेश्याओं ......!

(प्र॰ M) – अच्छन्दक जैसे पाखंडी ज्योतिषियों के पर्दाफाशों....

(प्र॰ F) – पुष्य जैसे निमित्तज्ञ सामुद्रिकों की, प्रभुमहिमार्थ इन्द्रद्वारा सहायताओं...

(प्र॰ M) – ऐसे तो कितकितने हज़ारों-हज़ार प्रसंगों, उपसर्गों, परिषहों, तपश्चर्याओं, सहे सभी मौनपूर्वक, समता-ध्यान पूर्वक, स्वयं गुप्त, अप्रकट रहकर, कतार के कतार, चले लगातार, जैसे वर्षा अनराधार...... !
अकेले, असंग, बिना अन्य आधार; केवल एक स्वात्म-शक्ति (का) पारावार !!

(प्र॰ F) अन्य किसी की सहाय, अपेक्षा या आधार की आवश्यकता ही कहाँ थी उस स्व-निर्भर, सत् पुरुषार्थी, पुरुष-सिंह, पूर्ण पुरुष पुराण-पुरुष को ? ...कि जिसकी स्वयं की आत्मशक्ति ही थी अव्याबाध, असीम, अनंत ...!

(मंत्र-सूत्र घोष M प्रतिध्वनि) "अहो ! अनंत वीर्यमयम् आत्मा !" (3)

(प्र॰ M) आत्मा की इस अनंत शक्ति पर ही तो स्थिर होनेवाला था, चिरविकसित और प्रसरित होनेवाला था – 'महावीर दर्शन', निर्ग्रंथ आर्हत् दर्शन, उनके 'सर्वोदय तीर्थ' का महा-जिनशासन ... ! इसी अतुल तीर्थ-प्रवर्तन धर्मचक्रप्रवर्तन और उसके प्रवर्तक तारक 'तीर्थंकर' के ही तो स्तुति-स्तवन-गुणगान गानेवाले थे सुर-असुर, इन्द्र-महेन्द्र, बुधजन-अबुधजन, निखिल सृष्टि के समस्त प्राणीगण – राग, द्वेष, अज्ञानादि के गाढ़ बंधनों से छुड़वाने –

(गानपंक्ति) (M) "भुवनेश्वर हे ! मोचन करो, बंधन सब मोचन करो हे !" (रवीन्द्रनाथ)

(वीरस्तुति गान) (F) "वीरः सर्व सुरासुरेन्द्र महितो, वीरं बुधा संश्रिताः ।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात् तीर्थमिदम् प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री-धृति-कीर्ति-कान्ति निचयः, श्री वीर भद्रं दिश ।" (BGM Instr.)

(प्र॰ F) प्रभु वीर ने अपने अनंत अपरिमित आत्म-सामर्थ्य एवं दृढ़ आत्म-संकल्प के बल से सहे हुए अनेकानेक उपसर्गों में—

(प्र॰ M) – मध्यम कक्षा का था ग्वाले द्वारा कानों में शरकट वृक्ष के कीले ठोकने और वैद्य द्वारा छहमाह बाद निकाले जाते समय प्रभु के द्वारा भी असह्य वेदना की भयंकर चीख निकल पड़ने का उपसर्ग.....

(प्र॰ F) – और उत्कृष्ट था संगमक देव के कालचक्र-वातचक्रादि बीस घोर मरणांत उपसर्ग एवं प्रभु के पीछे पीछे घूमनेवाले गोशालक द्वारा छोड़ी गई भीषण तेजोलेश्या = अग्नि की प्रचंड, प्राणघातक, असीम, उद्दंड, प्राणघातक धारा का उपसर्ग....! (Instrumental Horror Effects)

(प्र॰ M) परंतु "अंतहीन नाहितो अंधकार, कठिन आघात या अंगोछे बंध द्वार !" (रवीन्द्रनाथ) अंधकार कहाँ होता है अंतहीन ? ...विभाव अनादि का कहाँ टिकनेवाला था

ज्ञानप्रकाश के सन्मुख ! ... अब थोड़ी ही देर थी इस कैवल्य-प्रकाश के प्राकट्य की — कोटि कोटि सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान ऐसे शुद्धात्मा के कोटि वर्षों के विभाव-स्वप्न-भेदन की क्षमता की ~

(गाथागान) (Divine Instrumental Music)

"कोटि वर्ष का स्वप्न भी, जाग्रत होत हि नाश।
त्योंहि विभाव अनादि को, ज्ञानोदय में ग्रास॥" (सप्तभाषी आत्मसिद्धि ।१४)

"कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय" (आत्मसिद्धि ११४ श्रीमद् राजचंद्र)

(प्र.F) और फिर .....

(प्र.M) .... फिर ध्यान-लीन महातपस्वी महावीर विहार करते करते कौशाम्बी नगरी में पधारे, जहाँ प्रतीक्षा कर रही थी —

(प्र.F) — चन्दनबाला .... !

(प्र.M) बड़ा अद्भुत है इतिहास इस राजकुमारी का, वैशाली नगरी में बेची गई एक नारी का। ग्रंथ गवाह है — पांच माह पच्चीस दिन के उपवासी भविष्यदर्शी महावीर का यह अभिग्रह था कि — (प्रतिध्वनि)

(सूत्रघोष echo) "जबतक एक उच्च कुल की फिर भी कर्मवश दासी बनी हुई, मुंडित केश, बंदी शरीर और रोती हुई आँसूवाली अबला हाथों में उड़द लिये भिक्षा देने द्वार पर प्रतीक्षा करती न मिले, तब तक वे किसीसे भिक्षा नहीं लेंगे।" (- कल्पसूत्र)

(प्र.F) वही नारी थी —

(गीत F) (राग - मिया मल्हार : मिश्र : बसन्त, त्रिताल) "चन्दनबाला ! तेरा अद्भुत है इतिहास

(" M) इस इतिहास के पृष्ठ पृष्ठ पर (F) प्रगटे दिव्य प्रकाश...॥ चन्दनबाला.....।

(" F) एक दिन थी तू राजकुमारी, राजमहल में बसनेवाली
दासी होकर बिक गई पर, बनती ना उदास....॥ तेरा... चन्दनबाला...।
दुःखों का कोई पार न आया, फिर भी अडिग रही तुज काया।
कर्म (काल) कसौटी करे भयंकर, फिर भी भई न निराश॥ तेरा... चन्दनबाला।
वीर प्रभु को दे दी भिक्षा, प्रभु ने आर्यों में दे दी दीक्षा।
(M) श्रद्धा के दीपक से दिल में (२) (F) कर दिया दिव्य प्रकाश॥ तेरा ... चन्दनबाला।

(प्र.F) चन्दनबाला जैसी अनेक महिलाओं को उबारते एवं गोशालक जैसे उपसर्गकर्ताओं को क्षमा करते और अनेक उपसर्गों की कतारों को पार करते करते ध्यानलीन तपस्वी महावीर अपने आत्मध्यानमय निर्ग्रंथ जीवन के साढ़े बारह वर्षों के पश्चात .....एक दिन.... आ पहुँचे अपनी उद्देश्य-सिद्धि, अंतिम आत्मसिद्धि के द्वार पर (Soft Divine Music : Vibra +).....

द्रोपदी
श्यामल

(प्र.M) (Deeply Ecstatic rendering) वह ढलती दोपहरी... वह जृम्भक ग्राम (pictorial words) वह ऋजुवालुका नदी..... वह खेत की श्यामल धरती .... और वही शाल का वृक्ष...! (Celestial Soft Instrumental Music)

(प्र.F) इसी... बस इसी शाल वृक्ष के नीचे, गोदोहिका आसन में, 'पृथक्त्व वितर्क विचार' के पराकोटी के शुक्ल ध्यान में लीन निर्ग्रन्थ महावीर....!

(आनंदपरिम BGM) "भिन्न हूँ सर्व से, सर्व प्रकार से ... भिन्न हूँ" (सत्शास्त्रपठन)

(प्र.F. Contd.) — आत्मध्यान के इस सागर की गहराई में उन्हें यह स्पष्ट पारदर्शी अनुभूति हुई :—

(अनुभूति घोष : M|F) " परे,... शब्दों के कोलाहल से, ... विचारों की हलचल से ठहर है एक शांत, स्निग्ध नीरवता में अनेक प्रहर......... मनचाहा एकांत है जहाँ मैं हूँ | मैं = स्वयं का, स्वात्मा का अस्तित्व...| और साथ है एक प्रशांत महासागर | स्वात्मशुद्ध स्वरूप का महासागर...| जिसकी अतल गहराई में है चन्द्रवत् निर्मल, सूर्यवत् व्याप्त, सागरवत् गंभीर 'चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा, सागरवरगंभीरा' ऐसा स्वयं में ही केवल मैं, चैतन्यस्वरूपी ज्ञाता-द्रष्टा मैं = आत्मा...! शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन आत्मा !!"

(— स्व. कु. पारुल टोलिया : पारुलप्रसून + लोगस्स महाराम)

(धुनगान समासमूहगान) (F) "शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन स्वयंज्योति सुखधाम (2)"
(M) "केवल निजस्वभाव का अखंड बरते ज्ञान कहीए केवलज्ञान वह देह होते निर्वाण |" (2)
(F|CH) सच्चिदानंदी शुद्धस्वरूपी अविनाशी मैं आत्मा हूँ ! (2)
"आतमभावना भावता जीव लहे केवलज्ञान रे" (5)

(अनुभूति घोष : M : Echo) : " मैं इन सभी संगों से सर्वथा भिन्न, केवल चैतन्य-स्वरूपी ज्ञाता-दृष्टा आत्मा हूँ : विशुद्ध, स्वयंपूर्ण, असंग | ... मेरी यह परिशुद्ध आत्मा ही परमात्मा का स्वरूप है | ... अप्पा सो परमप्पा ..." (Divine Music)
"एगोऽहं सव्वथा भिन्नोऽहं ... शुद्धात्मस्वरूपोऽहं ... |"

(धुनगान Repeat समासमूहगान) "सच्चिदानंदी शुद्धस्वरूपी अविनाशी मैं आत्मा हूँ ! (2)
"आतमभावना भावता जीव लहे केवलज्ञान रे ..." (5)
(Instrumental Music)

केवलज्ञान कल्याणक

(प्र.F) ... और अपनी निःसंग आत्मा का यह ध्यान सिद्ध होते ही प्रस्फुरित होती है उनके वदन पर प्रफुल्ल प्रसन्नता, शरीर पर कंचन-कांति, साँसों में सुरभि, वाणी में माधुरी, वातावरण में प्रशान्ति, आकाश में दिव्य संगीत सुरावली ... और आत्मा में उस सर्वदर्शी, परिपूर्ण, पंचमज्ञान - केवलज्ञान और केवलदर्शन की ज्योति (Divine Instt. Music)

(M. सूत्रघोष) || जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ ||

(प्र.M) निर्ग्रंथ महावीर अब रागद्वेषादि की सब ग्रंथियों को सर्वथा छेदकर बन चुके हैं आत्मज्ञ, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, वीतराग, अरिहंत तीर्थंकर भगवंत .... उनके दर्शन और देशना-उपदेश श्रवणार्थ —

(प्र.F) देवों के विमान उड़े, मानवों के समूह उमड़े, पशुओं के झुंड (वृंद)
(Tabla Music) दौड़े, दिव्य समवसरण खड़े हुए, अष्ट प्रतिहारी सेवा में चले दिव्य-ध्वनि एवं देवदुन्दुभि के नाद गूंज उठे और ..... (Santoor Music)

(प्र. M: BGM Soft Celestial Instrumental) — परंतु ये भी अभी ये सर्वज्ञ केवली जिन प्रभु के बाह्य वैभयातिशय.... जब कि उनकी अंतस्-संपदा के अनंत अनंत ज्ञान-दर्शनमय आत्मवैभव तो अभी भिन्न थे, शब्दातीत अनुभवगम्यमय एवं अनहद-अनाहतगानमय थे! (BGM)

(गाथागान : BGM Dhoon)

"जो जिन देह-प्रमाण अरु, समोसरणादि सिद्धि।
जिन स्वरूप माने यही, बहलावे निज बुद्धि ॥"

(सप्तभाषी आ. सि. 25)

"जे जिन देह प्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकी रहे निज बुद्धि."

(— श्रीमद् राजचंद्रजी : आत्मसिद्धि 25)

(प्र. F) प्रभु के उस अनंत आंतर-वैभव-आत्मवैभव का स्वरूप-वर्णन तो केवल अनुभवगम्य ही ! (BGM: देह छतां जेनी दशा वर्ते देहातीत..........)

(प्र. M) बाह्यांतर निर्ग्रंथ दशा में, देह होते हुए भी देहातीत दशा में जो गम्य होता था उसमें बाहर-भीतर की सारी ही ग्रंथियों को- सर्व संगो-सम्बन्धों को छेद-भेदकर, पंच प्रमादों और विषय-कषायों को सर्वथा झकझोर कर शून्यशेष बनाकर, मौन-महामौन-त्रिविध मौन धारण कर, मन से तो पूर्ण मुक्त होकर प्रभु छद्मस्थ और केवलज्ञान-प्राप्त — दोनों अवस्थाओं में सतत, सर्वत्र आत्मदशा में ही विचरते रहे! चरण और विचरण पृथ्वी पर होते हुए भी और देह के भीतर बसते हुए भी उनका दिव्य विहार तो ऊर्ध्वगगन में! बाह्यपथ धरती पर, अंतर्पथ आकाश में !!

(प्र. F) बाह्य और आंतरिक, निश्चय और व्यवहार, इस जगत की समस्याएँ एवं परलोक के गंतव्य — किसी की भी उपेक्षा नहीं दोनों का समन्वय — 'जहाँ जहाँ जो जो योग्य है' की विवेकदृष्टि में। (परंतु) स्वयं का लक्ष्य तो सदा ऊर्ध्व और ऊर्ध्व — उस सिद्धलोक की ओर, कि जो उनका अंतिम गंतव्य है, जहाँ उन्हें अंत में पहुँचना है! सतत वही संचरण, वही स्मरण, वही दर्शन — आत्मप्रदेश का, शुद्धात्मप्रदेश का, सिद्धात्मप्रदेश का !!... उस दिव्यलोक में बहती आनंदगंगा का यहीं बस रहे अपने आत्मप्रदेश में अवतरण :-

(आनंदगान) "आज मेरे आतमप्रदेश में आनंदगंगा उमड़ी रे,
ज्ञानज्योति प्रकटी सर्वांग में, दृष्टि-अंधता बिनसी रे ...आज.
अद्भुत आत्म-स्वरूप निहारा, देह-देवल से भिन्न रे,
आत्मस्वरूप में जगत निहारा, छहों द्रव्य भिन्न भिन्न रे...आज.
लोकान्त में प्रभु सिद्ध निहारे, सुख संपत्ति भंडार रे,
सिद्ध समान स्वरूप ही मेरा, निज संपत्ति अधिकार रे....आज."

(— आत्मज्ञा माताजी धनदेवीजी: श्रीमद् राज. आश्रम, हम्पी, भक्ति झरणां 5)

(प्र.M) — ऐसे बाह्यांतर मौनमय आनंदलोक की आनंदगंगा में निमग्न और अनंत अनंत आत्मवैभव-प्राप्त प्रभु का वह अनुभवगम्य-अपलब्ध मौनदर्शन, आज केवलज्ञान पश्चात् जब मुखरित होने लगा तब?

(प्र.F) (— तब) साढ़े बारह वर्षों के गहन-गंभीर ध्यानमय प्रभु का वह महामौन, 'मौन' में से (ॐकार) 'नाद' में और 'नाद' में से 'शब्द' में रूपांतरित-परिवर्तित होने लगा.... और अनुगुंजित हो उठी शब्दों में ॐकार की दिव्यध्वनि —

(गंभीरश्लोक गान : M) "गंभीर तार रव पूरित दिग्विभागस्.....

"दिव्यध्वनिर् भवति ते विशदार्थ सर्व,भाषा-स्वभाव-परिणाम गुणैः प्रयोज्य: (श्री भक्तामर स्तोत्र)

(प्र.F) 12½ साढ़े बारह वर्ष के ध्यान-मौनान्त में प्रस्तुत, अपनी इस अभूतपूर्व, जग-उपकारक, अमर देशना में प्रभुने प्रकाशित किया —

(सूत्रघोष: प्रतिध्वनि: M) "जीव क्या? अजीव क्या? आत्मा क्या, कर्म और कर्मफल क्या? लोक क्या-अलोक क्या? पुण्य-पाप क्या? सत्य-असत्य क्या? आस्रव-संवर क्या? बंध-निर्जरा-मोक्ष क्या?"

"एगो मे सासओ अप्पा, णाण दंसण संजुओ।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोग लक्खणा॥"

"— ज्ञानदर्शन युक्त शाश्वत आत्मा ही एक मेरी है, बाकी तो सारे बाह्यभाव हैं, जो परिस्थिति-जनित हैं।"

दी (प्र.F) सर्वज्ञ प्रभु की अविरति देवों के समक्ष दी गई यह प्रथम देशना रही निष्फल, जब कि दूसरी थी, महासफल।

(प्र.M) मध्यम पावा की उस दूसरी देशना में पधारे थे कुछ पंडित — अनुभूति शून्य, शुष्कज्ञान भरे, मान-मद में मस्त प्रकांड पंडित — 'पोथी पंडित'। आये थे वे सर्वज्ञ प्रभु महावीर को वाद-विवाद में परास्त करने।

(प्र.F) सर्व के मनोज्ञाता, संपूर्ण समग्र ज्ञानी, प्रेम करुणा से भरे प्रभुने अपनी मधुर वाणी बहाई.... प्रथम गणधारक इन्द्रभूति गौतम कुछ पूछे उसके पूर्व ही उसके मनःप्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभुने कह दिया कि —

(प्र.M) "प्रिय गौतम! सुखपूर्वक तो आये हो न?...... तुम्हारे मन में आत्मा के अस्तित्व के विषय में संदेह है न?.... परन्तु तुम तुम्हारे वेद-पदों का ही सही, सम्यक अर्थ क्यों नहीं सोचते हो?... इन पदों का सच्चा अर्थ यह होता है — xxxxx

(प्र.F) — इस प्रकार कहकर, अद्भुत, अभूतपूर्व समाधान देकर, उसके वेदशास्त्रों का ही मंडन करते हुए प्रभु महावीर ने ऐसा सर्वस्वीकार्य, सम्यक्, सरल अर्थबोध दिया कि समस्त समवसरण सभा स्तब्ध और गौतम चकित, गर्वविगलित, नतमस्तक, परास्त और मंत्रमुग्ध!

(प्र.M) संदेहरहित बने हुए गौतम ने तुरन्त ही अपने 500 शिष्यों के साथ प्रभु से दीक्षा ग्रहण कर ली। वे उनके प्रथम शिष्य, प्रथम गणधर बने।

(प्र.F) प्रभु के आत्म-तत्त्वदर्शन का महाघोष गूँज उठा समवसरण में, समस्त विश्व में, सृष्टि के कण कण में ~

S (सूत्रघोष) (M) (अनुष्टुप छंद) "आत्माऽस्ति, स नित्योऽस्ति, कर्ताऽस्ति निजकर्मणः।
भोक्तास्ति च पुनर्मुक्तिर्मुक्त्युपायः सुदर्शनम् ॥ ↑

H (घोषगान F) "आत्मा है, वह नित्य है, है कर्ता निजकर्म,
है भोक्ता अरु मोक्ष है, मोक्षोपाय सुधर्म ॥" (सप्तभाषी आत्मसिद्धि 43)

G (" CM) "आत्मा छे, ते नित्य छे, छे कर्ता निजकर्म;
छे भोक्ता वळी मोक्ष छे, मोक्ष उपाय सुधर्म". (श्रीमद् राजचंद्र आत्मसिद्धि शास्त्र 43)

(प्र.F) फिर मनःसंदेह थे अन्य गणधरों के : (M) "आत्मा है तो उसका स्वरूप क्या है?...उसे देखा क्यों नहीं जा सकता?" इत्यादि

(प्र.F) प्रभु के अनेक नयों-दृष्टिकोणों-प्रमाणों से समाधान थे—

(सूत्रघोष (M)) "जो द्रष्टा है दृष्टि का, जो जानत है रूप, "अबाध्य अनुभव जो रहे वह है आत्मस्वरूप" (सप्तभाषी)
("जे द्रष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप....")

(प्र.F) कुछ ऐसे समाधान उपनिषदों ने भी दिये थे और अनेकभाषी लोक-कवियों ने भी सरल वाणी में व्यक्त किये थे।

(प्र.M) प्रभु की सर्वस्पर्शी समग्रता और सर्वज्ञता ने विशदता से इस प्रकार आत्मा की सिद्धि करते हुए, उसके नित्यत्व, कर्त्ता-कर्मत्व, भोक्तृत्व, मोक्षत्व एवं मोक्षोपाय सद्धर्मत्व — इन षट्पदों के द्वारा कर्म, पुण्य-पाप, आस्रव-संवर-बंध-निर्जरा-मोक्षादि नव (या सात) तत्त्वों को यथातथ्य समझा दिया शेष सारे पंडितों को। उन अन्य १० गणधरों को लेकर सभी 4400 शिष्य बने।

(प्र.F) इस विशद चर्चा के परिणामस्वरूप 'गणधरवाद' बना, जो गुजराती 'आत्मसिद्धिशास्त्र' में पूर्णतः प्रतिबिंबित हुआ — 2500 वर्षों के बाद भी वर्तमान काल में।

(प्र.M) प्रभु महावीर ने इन आत्मज्ञ गणधरों को 'गण' की संज्ञा और अनुज्ञा दी, त्रिपदी प्रदान की "उपनेइ वा, धुवेइ वा, विगमेइ वा" की। (उत्पत्ति-स्थिति-लय की)। उस से द्वादशांगी बनी, प्रभु-उपदिष्ट तत्त्वधारा, ग्रंथधारा — 14 पूर्वों की महाज्ञान धारा बही, नय नय रूपों में दिव्य, विश्वप्रश्नात्मक विशाल सरिताएं बह निकलीं....

(प्र.F) ....फिर तो ऐसी अनेक सरिताओं — अनेक विषयों की अनेक देशनाओं के द्वारा, अनेकों को तारनेवाला उनका धर्म-तीर्थ-धर्मचक्र-प्रवर्तन भारत की धरती पर अखंड चलता रहा... बहता रहा...

(प्र.M) आचार में करुणा, अहिंसा, संयम, तप; दर्शन और चिन्तन में स्याद्वाद-अनेकांतवाद एवं धर्म में सर्वविरति-देशविरति या पंच महाव्रत-बारह अणुव्रत से युक्त, निश्चय-व्यवहार के संतुलनवाले, सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्र के इस तत्कालीन और सर्वकालीन प्रयत्नक्रम में चतुर्विध संघ बना।

(प्र.F) उस समय के संघ में साधुओं में प्रधान थे गणधर गौतम स्वामी, साध्वियों में आर्या चन्दनबाला, श्रावकों में आनंदादि (१० उपासक) एवं श्राविकाओं में रेवती, सुलसा इत्यादि विदुषियाँ।
(प्र.M) उस युग की, देश और काल की समस्याएँ थीं—
(प्र.F) — ब्राह्मण-शूद्र, जाति-पाँति (प्र.M) ऊँच-नीच और पीड़ित नारी
(प्र.F) — दम्भ, पाखंड, हिंसा, पशुबलि (प्र.M) अंधाग्रह और झूठ की जाली
(प्र.F) — थोथे क्रियाकांड और जड़भक्ति.....
(प्र.M.) — इन समस्याओं के प्राधान्यों को सुस्पष्ट करें तो 1. ब्राह्मण प्राधान्य
(प्र.F) — 2. पुरुष प्राधान्य : नारी अन्याय (प्र.M) 3. कुल-संपत्ति-परिग्रह प्राधान्य — अमीर-गरीब वैषम्य (प्र.F) 4. अनुभूतिशून्य 'शास्त्र', वेदादि ग्रंथ प्रामाण्य और प्राधान्य (प्र.M) 5. जनजन-भाषा के स्थान पर संस्कृत भाषा प्राधान्य
(प्र.F) 6. अंतर्ध्यान मार्गों के स्थान पर जड़ बाह्य-क्रिया प्राधान्य।
(प्र.M) 7. अहिंसा, करुणा के स्थान पर यज्ञ-पशुबलि एवं हिंसा-प्राधान्य।
संक्षेप में (आत्मदृष्टि रहित) बाहरी आचारों एवं पुद्गल पदार्थों में आत्मबुद्धि।

(प्र.F) भगवान महावीर के पास इन सभी समस्याओं का समाधान था, सभी रोगों का उपचार था, सभी के प्रश्नों का प्रत्युत्तर था।
(प्र.M) — महा-परिग्रह के सामने दान-संविभाग-अपरिग्रह-समता-समानता।
(प्र.F) — एकांत आग्रह दृष्टि के सामने अनाग्रही, सत्यखोजी, समन्वयी स्याद्वाद-अनेकान्तवाद।
(प्र.M) — हिंसा के सामने अहिंसा, परम करुणा...
(प्र.F) — विषय-कषाय-प्रमाद के सामने संयम, तप — मौनादि अंतर+बाह्य तप।
(प्र.M) — शुष्क शास्त्रज्ञान-तोतापाठ के सामने विवेक प्रज्ञानुचिंतन युक्त अनुभवज्ञान, प्रयोगपूर्ण आत्मज्ञान, शुद्धात्म ध्यान।
(प्र.F) — जड़ भौतिकवाद-देहवाद के सामने आत्मवाद।
(प्र.M.) — इस प्रकार आत्मज्ञान, अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह, आत्मौपम्य 'सर्वात्म में समदृष्टि' — ये प्रभु के आत्मवादी जीवनदर्शन के सार-रूप पांच अंग बने — उनके सर्वस्पर्शी महा-धर्मचक्र प्रवर्तन-शासन के।
(प्र.F) — इन पांच प्रमुख अंगों की प्रभु ने लाक्षणिक, सांकेतिक सूत्र परिभाषाएँ दीं :
(प्र.M) — 1. आत्मज्ञानार्थ : "जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ"।
(प्र.F) — 2. अहिंसार्थ : "अहिंसा परमो धर्मः"। (* समणसुत्तं : ६७०)
(प्र.M) — 3. अनेकांतार्थ : "ण य तो एगस्स पियं, त्ति सेसयाणं पिया होइ।"*
(प्र.F) — 4. अपरिग्रहार्थ : "न वि अस्ति मम किञ्चित्, एक परमाणु मित्तंपि।"
संघ-समानतार्थ सर्वस्व (शासन प्रति) समर्पित।
(प्र.M) — 5. आत्मौपम्यार्थ : "सर्वात्म में समदृष्टि दें, इस वचन को हृदय में लिखें।"
(गान M/F) "गौतम जैसे पंडितों को सत्यपंथ बतलाया।
श्रेणिक जैसे नृपतियों को धर्म का मर्म सुनाया॥
रौहिणी जैसे चोर कुटिलों को मुक्ति का मार्ग दिखाया,
मेघकुमार समान युवान को जीवन मंत्र सीखाया॥" (Instrumental Music)

(गान) ※ उस वक्त 'धर्म' के नाम पर सचमुच पाखंडियों का कहर घोर। यज्ञों की बलियों में बेचारे निर्दोष पशुओं का रक्त तरबतर था॥

(प्र. F) — इस महाहिंसा की घोर नींद में डूबी दुनिया को प्रभु जिनेश्वर ने झकझोर कर जगाया — तब और अभी भी!

(Instrumental interlude)

(काव्यपाठ M)

प्राणदया, पशुरक्षा और सजग कृषि का कैसा (जीवन) रहस्य दर्शाया,
आनंदादि दस श्रावकों से महा-गोकुलों को बसवाया, (उपासकदशांग)
नारी का तो उद्धार बड़ा कर, सम-स्थान दिलवाया;
साध्वीसंस्था सुदृढ़ बनाकर, वर्तमान तक चलवाया!
परिग्रह-घोर का फंदा छुड़ाकर, 'मूर्च्छा' उसे बतलाया;
दान-धर्म का स्वयं फैलाकर, समाज-साम्य फैलाया।
दीन स्वामी पुणिया जैसे श्रावकों को ऊंचा बिठाया;
सेठों-राजाओं से भी उनका स्थान श्रेष्ठ समझाया/दरशाया॥
साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका (संघ) विधान अद्भुत बनवाया;
महाक्रान्ति का शंख फूंककर सोये जग को जगाया (जगा उठवाया) ※

(Instrumental BGM)

(गान : F/CH) "वीर जिनेश्वर! सोई दुनिया जगाई तूने...!
ज्ञान की मधुर सुरीली बंसी बजाई तूने.....!
वीर जिनेश्वर! सोई दुनिया—

पशुओं पर छुरियाँ चलतीं, रक्त की नदियाँ बहतीं।
करुणा के सागर! करुणागंगा बहाई तूने.......!
वीर जिनेश्वर! सोई दुनिया—

पंथों का झूठा झगड़ा, जनता का मानस बिगड़ा
मानव की अटल प्रतिष्ठा, जग में जताई तूने...!
वीर जिनेश्वर! सोई दुनिया—

पापों का पंक धोना, "नर से नारायण" होना।
'अमर' को अमर पद की राह दिखाई तूने...!
वीर जिनेश्वर! सोई दुनिया-

(— उपाध्याय अमर मुनि, वीरायतन)

(प्र. M) सारे युग पर, सचराचर निखिल विश्व पर छा जानेवाला; समय की एवं सनातन अनागत काल की समग्र समस्याओं को जड़मूल से सुलझानेवाला, सभी का ही उदय मंगल चाहनेवाला वीर जिनेश्वर का यह कैसा विशाल, विराट, व्यक्तित्व...! कैसा अनुपम सर्वोदय तीर्थ—अतुल तीर्थ-प्रवर्तक...!! कैसा अभूतपूर्व महाक्रान्तिकार युगदृष्टा—युगस्रष्टा कर्मवीर, क्षमावीर, प्रयोग-पुरुषार्थ वीर...!!!

(प्र. F) क्या हम कल्पना भी कर सकते हैं इस त्रस्त-ध्वस्त-हिंसाग्रस्त आतंकित जग में (युग में) जीते हुए, बैठे हुए कि जहाँ—

(काव्यपाठ M) "धधक रहीं चहु ओर हिंसा-ज्वालाएँ,
धड़ाधड़ खुल रहीं वधशालाएँ-मधुशालाएँ;
और अब भी बिक रहीं हैं—
यहाँ पर (कई) (सीता-द्रौपदी) चन्दनबालाएँ.....। (—युगराज जैन : युगप्रधान)

(Instrumental effect)

(प्र. F) गिरे हुए मनुष्य को उठाकर, पापी-पतित-दलित का हाथ थामकर, उसमें ही निहित यह 'नर से नारायण' बनने की जन्मसिद्ध गुप्त क्षमता-सम्भावना बतलाई प्रभु ने — (कवित्त)

"तुम अनंत शक्तिमान हो, आत्म-सामर्थ्य (के) निधान हो,
शुद्ध-बुद्ध-चेतन्यघन, साक्षात् ज्ञान (हो), सिद्ध समान हो।"

(गान M) "सर्व जीव हैं सिद्ध सम, जो समझे, बन जायँ। (छन्द · गुजराती)
सद्गुरु-आज्ञा, जिनदशा, निमित्त कारण मॉय ॥ (श्रीमद् राज० आ.सि. सप्तभाषी)

(घोष) "तुम ही हो शुद्ध-सिद्ध चिद्रूप,
तुम ही हो, मोक्षस्वरूप .....!"
(तुं छो मोक्ष स्वरूप, तुं छो मोक्षस्वरूप ... तुं छो०)"

(प्र. F) — पुकार पुकार कर, दिव्यध्वनि के ढोल बजाकर, डंके की चोट पर प्रभु ने आत्मज्ञान का यह उद्घोष किया और अपने को क्षुद्र, निर्बल माननेवाले मानव को बुलन्दी से कहा कि —

(प्र. M. घोष) "हाँ कह दे, अनुभव कर ले कि - तुम देह मात्र नहीं, आत्मा हो, ब्रह्म हो, सकल ब्रह्म हो, शुद्ध-बुद्ध-सिद्ध मोक्षस्वरूप हो।

(कवित्त) "दीन-हीन देह-दीन नहीं, विषय-कषाय-प्रमाद में तल्लीन नहीं,
इस क्षुद्र-क्षणिक-क्षणभंगुर देह-यंत्र में लीन नहीं;
देह और देह-दीनता ही तो भ्रम, तुम हो आत्मा सकलब्रह्म,
देह-भिन्न चैतन्य स्वरूपी, मोक्षस्वरूप परब्रह्म, मोक्षस्वरूप परब्रह्म।"
(Instrumental Interlude)

(प्र. F) — आत्मबोध, आत्मसाक्षात्कार करा देनेवाले ऐसे झकझोरते उद्बोधनों के द्वारा प्रभु एक ओर से अंतर्जगत में और जीवन की समस्त समस्याओं के निराकरण-पथदर्शनों के द्वारा दूसरी ओर से बहिर्जगत में, मानव को जगा रहे थे .....

(प्र. M) अंतर्जगत और बाह्यजगत दोनों पर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सिद्धलोकगामी प्रभु का प्रभाव था .... ज्ञान-दर्शन के अक्षुण्ण (अक्षय) भंडार का अंतर्वैभव और चौंतीस अतिशयोयुक्त अचिंत्य माहात्म्य और सामर्थ्ययुक्त प्रभु का बाह्यवैभव ...! दोनों से प्रवृत्त-प्रवर्तित उनके धर्मचक्रप्रवर्तन के अंतर्जगत् में थे — दान, शील, तप, भाव के चतुर्विध धर्मरूप जिन में बारह भावना - सोलह कारण भावना आदि के द्वारा सर्वाधिक महत्ता थी भाव की। भाव ही धन अपना, भाव, शुद्ध भाव (शुभाशुभ भाव परे का शुद्धात्मभाव) ही तो था सर्वस्व !! "आतमभावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे।" "पाँच समवाय कारणों" में भी इस आत्मभावयुक्त सत्पुरुषार्थ की महत्ता !!!

(प्र. F) — तो बाह्यजगत में थे करुणा-प्राणिदया-प्रसूत, हिंसा-प्रमाहिंसा-पशुबलि रोध प्रवर्तन और साथ में ही दस दस हजार के विराट गोकुलों में गोपालन-कृषि आदि द्वारा आनंद आदि दस दस श्रावक-उपासकों का गृहवास: दान-अपरिग्रहयुक्त मूर्छारहित गृहवास!

(BGM जान पीला)....

(प्र.M) जीवन के बाह्यजगत्-अंतर्जगत् दोनों पक्षों के संतुलन से भरा भगवंत का एक अनन्य, अनुपमेय, अभूतपूर्व जीवन-दर्शन था....

(प्र.F) इस जीवनदर्शन-महावीर दर्शन के सारे ही बाह्यांतर स्वरूपों में सदा-सर्वदा शीर्ष स्थान पर बना रहा था उनका, अंतस्-स्रोत का आत्मदर्शन! वे प्रत्येक मनुष्य को व, उसके भीतर छिपे इस अपार, अनंत सामर्थ्यवान स्वयं-शक्ति के सागर का दर्शन करा रहे थे....

(द्रव्यवादी नहीं आत्मवादी प्रश्न)

(प्र.M) — 'दर्शन' ही नहीं, उसकी अनुभूति की अतल गहराई में अंतर्यात्रा करा देते थे.....क्या भरा पड़ा था वहाँ पर?

(प्र.F) — वहाँ प्रवेश करने पर एक सामान्य गोताखोर मानव भी, एक डुबकीभर लगाते ही अनुभव कर उठता था कि —

(गान M) "सीप किनारे चमकीले हैं, चुनकर क्यों पछताना?
यदि तू चाहे मोती लेने, (तो) गहरे पानी आना....।"
(संकलित)

(प्र.M) मोती तो गहरे पानी में है — आनंद, सुख, शांति के मोती....।

(घोष M) "हे जीव! भ्रमित मत हो। सुख और शांति भीतर में है, बाहर खोजने से नहीं मिलेगी, भीतर का सुख स्वयं की समश्रेणि में है,...उसे पाने के लिये बाहरी पदार्थों का आश्चर्य भूल जा और समश्रेणि के गहरे पानी में (प्रवेश कर) आ जा, जहाँ —
(श्रीमद् जी : वचनामृत)

(प्र.F) — जहाँ नहीं है —

(प्र.M) "शब्दों का हाहाकार (और), विचारों का विस्तार और संकल्प-विकल्पमय मन का संसार!.....आखिर इन सभी के पार तो है विराजित प्रशांत महासागर, अपने भीतर लहराता हुआ!"

(प्र.F) "भीगी भीगी शांत नीरवता में काल जब खो जाता है और अपना प्रिय ऐसा एकांत जब अस्तित्व धारण कर लेता है, तब अपने इस अंतरस्थ प्रशांत महासागर तक पहुँचा जाता है और पाया जा सकता है उसकी अतल गहराई में डूब जाने का आनन्द एवं (वहीं स्थित) मूल्यवान मोतियों का खज़ाना.....!"

(प्र.M) "अंततोगत्वा यह सागरवत् गम्भीर ही तो है अपना सिद्ध, बुद्ध, शुद्ध स्वरूप....! उसकी सिद्धि पाने के लिये ही तो हम प्रार्थना करते रहे हैं — सदियों से, युग युगान्तरों और जन्म-जन्मांतरों से उस आलोकमय सिद्धलोक के सिद्ध भगवंतों से —

(प्र.F) "चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा, सागरवरगंभीरा, सिद्धा ! सिद्धिं मम दिसंतु...।"

(कृपाण धाम) " आत्मसिद्धिं मम दिसंतु — शुद्धात्मसिद्धिं मम दिसंतु — सहजात्मसिद्धिं मम दिसंतु..।"

(— स्व.कु. पारुल टोलिया, प्रियवादिनी, पारुल-प्रसून 16)

(प्र.F) सर्वज्ञ सिद्धलोकगामी प्रभु महावीर का ऐसा सभी को आत्मसिद्धि दिला देनेवाला, झकझोर कर प्रशांत अंतस्-सागर में प्रवेश करा देनेवाला आत्मबोध होते हुए भी और उनकी सर्वज्ञात विश्वमहिमा एवं 34 चौंतीस अतिशयों-युक्त अचिंत्य सामर्थ्य तथा माहात्म्य होते हुए भी —
(Instmtl BGM)

(गीत m: लोकधुन) "एक दिन पूर्व का शिष्य गोशालक, प्रभु को देता गाली।
'मैं सर्वज्ञ महावीर जैसा'- कह के चली चाल काली॥
तेजोलेश्या छोड़ के उसने चेताई आग की ज्वाला,
वीर के बदले खुद ही उस में जलने लगा गोशाला॥" (3)
(Soormandal)

(प्र.F) सर्व को सुख-शांति-शाता-आत्मबोध-प्रदाता भगवंत के सर्वमंगलमय सर्वोदय तीर्थ का, उनके आत्मदर्शन-प्रधान महा-शासन प्रवर्त्तन — 'धर्मचक्रप्रवर्तन' — का आधार क्या था? आधार था —

(प्र.M) — आधार था: साढ़े बारह वर्षों के पूर्वोक्त सुदीर्घ गहन, बाह्यांतर-आत्मध्यानमय मौन — के पश्चात् प्रस्फुरित उनकी ॐकार दिव्यनाद — दिव्यध्वनिमयी, अनंत अनंत नयों, दृष्टिकोणों से भरी हुई अमृतरूपिणी देशनावाणी —

(प्र.F) गंगा के निर्मल नीर जैसी उनकी वाणी में अपूर्व सम्मोहन था, जादु था, अमृत था, अनंत सत्य का आत्मबोध था ~

(गीत: राग कार: Instmtl BGM)
"अनंत अनंत भाव भेद से भरी जो भली, अनंत अनंत नय निक्षेप से व्याख्यानित है।
सकल जगत हितकारिणी हारिणी मोह, तारिणी भवाब्धि मोक्षचारिणी प्रमाणित है॥"
अनंत अनंत (श्रीमद् राजचंद्रजी)

(Instrumental Music Change ....) ...

(2 गीत: राग मिश्र) "गंगा के निर्मल नीर-सरिखी, पावनकारी वाणी (बानी),
घोर हिंसा की जलती आग में, छिड़के शीतल पानी।
उनके चरण में आकर झुके, कुछ राजा कुछ रानी;
शेर और बकरी वैर भुलाकर, संग करे मिजबानी॥"
(Soormandal)

(प्र.F) कहते हैं — तीर्थंकर भगवान महावीर की यह धीर-गंभीर, मधुर-मंगल, मृदुल-मंजुल सरिता-सी वाक्-सरस्वती राग मालकौंस में बहती थी..... (Instmtl BGM: Raga MALKAUNS, Teen Taal)

(वृंदगीत) (मानव) "मधुर राग मालकौंस में बहती तीर्थंकर की वानी।
मानव को नवजीवन देती तीर्थंकर की वानी॥
॥ दिव्यध्वनि ॐकारी ॥

धीर गम्भीर सुरों में सोहे, सुरवर मुनिवर सब कोई मोहे।
शब्द शब्द पर होती प्रकट जहाँ, स्नेह गंगा कल्याणी॥
॥ मधुर राग० ॥

वादी षड्ज, मध्यम संवादी, बात नहीं कोई विषम विवादी।
सादी भाषा, शब्द सरलता; सबने समझी-मानी॥
॥ मधुर राग० ॥

'सा ग म ध नि सां - नि सां' की सरगम, चाहे जग का मंगल हरदम।
पत्थर के दिल को भी पलमें; करती पानी... पानी....! ॥
॥ मधुर राग० ॥"

* * *

(काव्य-गान)

"तेरी वाणी जगकल्याणी, प्रखर सत्य की धारा।
खंड खंड हो गई दम्भ की, अंधाग्रह की कारा॥"

(-अमरमुनि)

(BGM "जाना तुझको दूर जाना")

* * *

(प्र. F) — इस अनंत महिमामयी जगकल्याणी वाग्-गंगा को केवलज्ञान के बाद तीस वर्ष तक अनेक रूपों में, अनेक स्थानों में निरंतर बहाते हुए और चतुर्विध धर्म को सुदृढ़ बनाते हुए अरिहंत भगवंत महावीर ने अपने ज्ञान से जब —

(गीतपंक्ति) (M) (BGM: Raga Bhairavi Tunes)

" जान लिया कि जीवनयात्रा होने आई अब पूरी।
विहार का कर अंत प्रभुजी, आय बसे पावापुरी....॥"

(प्र. M) प्रभुने अपने जीवनान्त के पूर्व जीवन-संध्या में जो महत्त्व की बात अपनी अंतिम धर्मदेशना में कही थी, वह थी — पुण्यकर्म फल — पापकर्म फल के पचपन (55) + पचपन (55) अध्ययनों के बाद विनय की, विनय-माहात्म्य (महिमा) की।

(प्र. F) 36 छत्तीस उत्तराध्ययनों में (यह) विनय-महिमा — विनय का राजमार्ग दर्शानेवाले उनके ये 'विनय-सूत्र' थे :—

(गान M) "ऐसो मारग विनय को, कह्यो जिनेन्द्र अराग।
मूल मार्ग के मर्म को, समझे कोई सुभाग्य॥"

(-सहजानंदघनजी) (सप्तभाषी आत्मसिद्धि - 20)

(गान F) "विनयो मार्ग विनय तणो, भाख्यो श्री वीतराग
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य।" (श्रीमद् राजचंद्रजी), आसि 20)

"मूळ मारग सांभळो जिननो रे...." (" ")

(BGm "जाना तुझ को दूर जाना)

(प्र.M) "जो गुरु की (माता-पिता की भी) आज्ञा का पालन नहीं करता, जो उनके पास उनकी देखरेख में (सद्गुरु-निश्रा में) नहीं रहता, जो उनसे शत्रुता का बर्ताव रखता है, जो विवेकशून्य है उसे अविनीत कहते हैं।"
(महावीर वाणी : पं. बेचरदासजी-73)

(प्र. F) "जो शिष्य अभिमान, क्रोध, मद या प्रमाद के कारण गुरु (माँबाप) की विनय-भक्ति नहीं करता, वह इससे अभूति अर्थात् पतन को प्राप्त होता है। जैसे बाँस का फल बाँस के ही नाश के लिये होता है, उसी प्रकार अविनीत का ज्ञानबल भी उसी का सर्वनाश करता है।"
(महावीर वाणी : ↑ : 78)

(प्र.M) "अविनीत को विपत्ति प्राप्त होती है, और विनीत को संपत्ति — ये दोनों बातें जिसने जान ली हैं, वही शिक्षा प्राप्त कर सकता है।" (महावीर वाणी : ↑ : 79) "विद्या विनयेन शोभते।"

(प्र. M) "स्वच्छंद, मत-आग्रह त्यजे (नशे), वरते (विलसे) सद्गुरु लक्ष।
(श्लोक-गान) कह्यो याहि सम्यक्त्व है, कारण लखी प्रत्यक्ष ॥ (सप्तभाषी-17)

(F) "स्वच्छंद, मत आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु लक्ष;
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष." (आत्मसिद्धि-17)

(M) "रोके जीव स्वच्छन्द तब, पावे अवश्य मोक्ष।
या विधि पाया मोक्ष सब, कहें जिनेन्द्र अदोष ॥" (सप्तभाषी-15)

(F) "रोके जीव स्वच्छन्द तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष." (आत्मसिद्धि-15)

(प्र.M) स्वच्छन्द का फंद छोड़कर और सद्गुरु लक्ष अपनाकर समकित और मोक्ष पाया जा सकता है ऐसा शिष्य के लिये आवश्यक बतलाकर भगवंत मानों डंके की चोट पर उसे आदेश देते हैं :—

(घोष-M) "गुरुणाम् आज्ञा अविचारणीया"

(प्र. F) सद्गुरु-आज्ञा को शिरोधार्य करने में विचार न करें और 'तहत्ति' कहकर व्यवहार करें।

(प्र.M) — तो दूसरी ओर, सुविनीत शिष्य के ऐसे विनय का अनुचित लाभ उठानेवाले अ-सद्गुरुओं को (वर्तमान के अनेक कथित गुरुओं-कुगुरुओं की भाँति) लालबत्ती बतलाते हुए प्रभु झाड़ते-फटकारते-झकझोरते हैं —

(श्लोक-गान M) "असद्गुरु इस विनय को, लाभ लहे जो किन्दु।
महामोहनीय-कर्मसों, चल्यो (डूबत) जाय भव-सिन्धु ॥" (सप्तभाषी-21)

(F) "असद्गुरु ए विनयनो, लाभ लहे जो कांई;
महामोहनीय कर्मथी, बूडे भवजळमांही." (आत्मसिद्धि-21)

(प्र.F) कितनी महिमा शिष्य के विनय की और सद्गुरु की सजगता की!

(प्र.M) अन्यथा, जैसा कि देखा जाता है, "गुरुलोभी शिष्य लालची, दोनों डूबे साथ।" — इसीलिये तो परवर्ती, वर्तमान काल के सुचिंतकों को छेद उड़ाना पड़ा है सारे गुरुडम (GURUDOM) का, गुरुडम की बोलबाला का!! (पर यह दूसरी अति है, सम्भावना है।)

(प्र.F) दूरदर्शी, त्रिकालज्ञानी भगवान महावीर को सर्व काल में आनेवाली ऐसी सारी ही सम्भावनाओं का ज्ञान था, स्पष्ट पूर्वदर्शन था, दोनों बाजुओं के भयस्थानों का अनुमान-आकलन था।

(प्र.M) इसीलिये तो उन्होंने अपने साढ़े-बारह वर्ष के छद्मस्थ और तीस वर्ष के धर्मतीर्थप्रवर्तन समय को मिलाकर बयालीस वर्ष के कालखंड के अंतिम पड़ाव पर आकर, विश्व-विदा से पूर्व विनय-महिमा की यह महती देशना-वाग्धारा बहाई।

(प्र.F) प्रभु का जीवन-समापन निकट देखकर और उनके जन्मनक्षत्र में दो हजार वर्ष तक रहनेवाले 'भस्मराशि' नामक ग्रह को संक्रान्त होता देखकर, प्रभु के परम भक्त शक्रेन्द्र अत्यंत चिंतित हुए।

(प्र.M) शक्रेन्द्र ने सोचा कि, "यदि यह क्षुद्र भस्मराशि ग्रह इतने दीर्घकाल तक प्रभु के जन्मनक्षत्र में रहेगा तो उतना समय उनके साधु-साध्वी संघ के पूजा-सत्कार उत्तरोत्तर वर्धमान नहीं होंगे..... उनके महान शासनतीर्थ का विकास-विस्तार नहीं होगा।"

(प्र.F) — ऐसी महाचिंता को लेकर उन्होंने प्रभु के महानिर्वाण के समय के पूर्व आकर प्रभु से प्रार्थना की —

(घोष M) "हे सर्वशक्तिमान प्रभु! एक क्षण आपका आयुष्य बढ़ा दीजिये, जिससे कि यह क्षुद्र भस्मराशि ग्रह आपकी उपस्थिति में ही आपके जन्मनक्षत्र में प्रवेश करे तो आपकी दृष्टि पड़ने से आपके शासन को कोई बाधा न हो।"

(प्र.F) परंतु प्रभु ने कहा —

(घोष M) "हे इन्द्र! ऐसा आजतक न तो कभी हुआ है और न भविष्य में होगा कि तीर्थंकर भी अपने आयुष्य को एक क्षण मात्र भी बढ़ा सके!... तीर्थ को बाधा अवश्य होनेवाली है और वह होगी। परंतु 86 छियासी वर्ष के कल्कि राजा का तेरे द्वारा निग्रह होने पर और दो हजार वर्ष के पश्चात् भस्मराशि ग्रह मेरे जन्मनक्षत्र में से निवृत्त होने पर एवं तेरे राज्य पर आसीन कल्किपुत्र धर्मदत्त के राज्य से लेकर साधु-साध्वी के उत्तरोत्तर वर्धमान पूजा-सत्कार होंगे।" (- युगप्रधान श्री भद्रबाहु स्वामी: 'कल्पसूत्र')

(सूत्रघोष : प्र.F) ग्रंथ साक्षी देकर कहते हैं~

(" प्र.M) "जिनमत रूपी शेर को कोई भी क्षतिग्रस्त नहीं कर सकेगा, परंतु अपने आंतरिक भेदों के कारण ही वह व्रणग्रस्त हो जायगा।"

(प्र.F) शेर! प्रभु महावीर का लाक्षणिक 'लांछन' और सर्वोच्च निर्भय एकाकी पुरुषार्थ-सत्ता-महत्ता का प्रतीक!! बिना किसी की सहाय के सदा एकाकी विचरण करनेवाला!!! उसे कौन परास्त कर सकता है?

(प्र.M.) ....पर वह भी, जिनमत रूपी-वीर प्रतीक ऐसा 'शेर' भी, आखिर व्रणग्रस्त हुआ... जिनशासन के भीतरी भेदों से ही वह महाप्राण-प्राणी घायल हुआ..! प्रभु के स्वयं के आर्ष-वचन सिद्ध हुए....!! इस काल में वेदना-व्यथित वीरशिष्य श्रीमद् राजचन्द्रजी के वचनामृतों ने उनकी साक्षात् प्रतीति दिलवाती साक्षी/गवाही दी... (संदर्भ : परिशिष्ट वचनामृत) ⊗

(वेदना-गान : भैरवी) "आपस के भेदों ने देखो,
शासन को बरबाद किया (CH) जिनशासन को -(२)
जिनका था मोहताज़ ज़माना
आज उसे मोहताज किया...!
आपस में हम रहे झगड़ते, गैरों ने आ राज किया;
जिनका था मोहताज़ ज़माना, आज उसे ताराज़ किया।"
(सौजन्य कवि रमेश गुप्ता : प्रतिकाव्य)

⊗(सूत्रघोष M वचनामृत) "आश्चर्यकारक भेद उत्पन्न हो गये हैं xxx इस काल में ज्ञान क्षीण हुआ है; और ज्ञान क्षीण होने से मतभेद अनेक बढ़े हैं xxx मतभेदादि कारण से श्रुत-श्रवणादि नहीं फलते। (ग्रंथ वचनामृत २७)

(प्र.F) और दो दो हज़ार वर्ष तक महान वीतराग-शासन को भी व्रणग्रस्त-भेदविभक्त रखनेवाली, प्रभु वीर की विदा की हृदय विदारक बेला निकट आ गई........

(प्र.M) समीप आया परमप्रभु के परिनिर्वाण के परमप्रस्थान के पल..... (Super Pathetic Rendering & Tragic Music Bhairavi Dhun)

(प्र.F) { सुधर्मा स्वामी के प्रश्नोत्तर पूर्ण वह अलौकिक समवसरण...! तत्पश्चात् धर्मपाल राजा का वह प्रशांत सभाभवन...!!

(प्र.M राजा अवंति [illegible] समक्ष) { वह अभूतपूर्व अखंड, अंतिम देशना..... और अमावास्या की वह अंतिम रात्रि...!!! (Silent Most Pathetic Music)

(प्र.F) (serene, pathetic, deeply sentimental)

(Echo) → सोलह प्रहर...अड़तालीस घंटे.... दो दिन-रात अखंड बहने के बाद अचानक— (Echoes; Instrumental Musical Pathos)

(प्र.M) (Pathetic Most Rendering in Base Voice, BGM Instt contd.) Echoes

.....पूर्ण होने लगी प्रभु की वह अखंड बहती पाप धारा.....
पर्यंकासन में स्थिर हुई उनकी स्थूल औदारिक काया......
मन-वचन-शरीर के व्यापारों का उत्सर्ग किया गया.....
अवशिष्ट अघाती कर्मों का सम्पूर्ण क्षय किया गया.........
सभी क्रियाओं का उच्छेद किया गया.....और (Deep Base Voice)
सभी अंगों और अंगों को भेद कर प्राणों को विशुद्ध
सिद्धात्मा की निष्कंप, निष्कम्प, निस्पन्द, नीरव और मेरु-सी
अडोल अवस्था तक पहुँचाया गया..... (Pathetic Base)

(प्र.F).....जब प्रभु सर्वांग अनुभूति कर रहे—

(घोष M) "अहमिक्को खलु सुध्धो, निम्मल णाण-दंसण संजुओ।
ण वि अत्थि मम किंचई, एक परमाणु मित्तंपि॥" (समयसार)

(गान M) "एक परमाणु मात्र की मिले न स्पर्शता,
पूर्ण कलंकरहित अडोल स्वरूप रे।
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरु-लघु, अमूर्त सहजपद रूप रे॥"
(—श्रीमद् राजचन्द्र : अपूर्व अवसर)

(प्र.F) —और जब कि अंत में एक शब्दहीन घोष (अनाहत-अनहद घोष) उठा :

(घोष M) (clear, Echo) "यः सिद्ध परमात्मा स एवाऽहम्।"
"जो सिद्ध परमात्मा है, वही मैं हूँ॥"

(Tragic BGM) और पलभर में ही प्रभु परमशांति, परमपद परिनिर्वाण को प्राप्त हो गये...! (Tragic Bhairav)

(गीत: भैरवी: M) (Super Imposed Voice, Echoes, High Pitch)

"साँस की अंतिम डोर तक रखी, अखंड देशना जारी।
आसो अमावस रात की बेला, निर्वाण की गति धारी।"

(गीत: धुन: घोष : Instrumentals) "परमगुरु निर्ग्रन्थ सर्वज्ञ देव" (5)

(प्र. M. Extremely Emotional Voice) हवा में शंख, वन में दुन्दुभि और जन-मन में रुदन के अनगिनत स्वर उठे..... प्राणज्योति अनंत ज्योति में विलीन हो गई.....! ज्योत में ज्योत मिल गई— 'भिन्ना प्रत्येगात्मना' * का अपना स्वतंत्र अस्तित्व सम्हालती हुई!! ...प्रभु अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत वीर्य, अनंत सुखमय, अजर अमर सिद्धलोक के ऐसे आलोक में पहुंच गये कि जहाँ से कभी लौटना नहीं होता, कभी जन्म-मृत्यु के चक्र में आना नहीं पड़ता!!
(BGM Bhairav Song →)

* 'तत्त्वार्थ सूत्र'

(गीत : भैरवी : F+M) (1) "या कारण मिथ्यात्व दियो तज,
क्युं कर देह धरेंगे ?
अब हम अमर भये न मरेंगे।"
(म. आनंदघनजी)

(गीत) (F+M) (2) (भैरवी)
"इस अंधेरी अमा-निशा को बुझ गई महान ज्योति,
धरती पर तब छाया अंधेरा, अँखियाँ रह गईं रोती ॥"
गूँज उठे तब देव दुन्दुभि, लहराई देवी वाणी :
"आनन्द मनाओ! जग के लोगों! प्रभु ने मुक्ति पाई ॥ (3)

(अंतिम गान : भैरवी : F+M) (3) आसो अमावस की श्यामल रात को,
दीप-दीपावली की मधरात को,
प्रभु वीर ने विदाई ले ली थी,
उस दिन/वक्त मेरे भग्न-हृदय ने, यह एक धून जगाई/लगाई थी :
"हे वीर! प्रभु वीर!" (CH)
अखंड अनुपम देशना वहते, 'विनय-महिमा' वर्णन करते,
वाणी अनराधार बहाई थी, उस दिन मेरे भग्न-हृदय ने,
यह एक धून लगाई थी : "हे वीर! प्रभु वीर!" (CH)

प्रविष्ट/ ग्रह- भस्माग्रह प्रविष्ट होते, जन्म-नक्षत्र संक्रमित बनते,
इन्द्र (शक्रेन्द्र) ने दौड़ लगाई थी, गहरी चिंता जताई थी;
शासन-काज क्षण आयु बढ़ाने, प्रभु से अरज/अर्ज गुज़ारी थी :-
"अंधकार-उल्लू गरजेंगे, हिंसक पाखंडी बरसेंगे/नाचेंगे,
अबल पशु-दीनजन तरसेंगे, साधु-साध्वी अपूज बिचरेंगे,
शासन-दर्शन-संघ सब जग में, घोर उपेक्षित बन जायेंगे।
"प्रभु! रुक जाओ!! रुक जाओ क्षणवार (घोरातिघोर)" - की अश्रुवेदना इन्द्र की,
प्रभु ने लेश नहीं अपधारी थी, उस दिन मेरे भग्न-हृदय ने
यह एक धून लगाई थी : "हे वीर! प्रभु वीर!" (CH)
सिद्ध-पद-गामी तो तनिक न रुकते, 'निरुपक्रम' आयु शेष न रहते,
महा-निर्धार से रंच न हटते, भावी अनहोनी उच्चारी थी-
और निर्वाण की गति धारी थी, उस दिन मेरे भग्न-हृदय ने
यह एक धून लगाई थी : हे वीर! प्रभु वीर!" (CH)

(Instr. change)
(प्र. F) प्रभु महावीर के प्रधान शिष्य, अनंत लब्धि-निधान गणधर गौतम स्वामी
प्रभु के प्रति उनकी सर्वथा समर्पित, अनन्य, 'प्रशस्त भक्ति' ...!! प्रभु से
वे सदा ही जिज्ञासा - प्रश्नपृच्छा करते जिससे 'गौतमप्रश्नावली' एवं
'गौतम-पृच्छा' आदि ग्रंथ बाद में प्रकाश में आये सूत्रादि के साथ।
(टेरा 3600 / जातने !)
(प्र. M) - ऐसे प्रभु-संनिष्ठ गौतम स्वामी का प्रभु के प्रति आत्यंतिक राग
उन्हें केवलज्ञान प्राप्त होने नहीं देता था - उनके स्वयं के पचास हज़ार

शिष्यगणों और अष्टापद-गमन-पश्चात् साथ लाये गये तापसों तक को भी यह अंतिम कैवल्य-प्राप्ति होने पर भी! ... उनका तो एक ही लगन थी प्रभु-भक्ति की, वीर-अनुरक्ति की और उनकी अमृतवाणी की प्राप्ति की!

(प्र.F) इन वचनों के द्वारा भी कभी "इणमेवं खणं वियाणिया" — वर्तमान के ये क्षण सुवर्ण-क्षण हैं, अभी, इसी क्षण ही साध लो (अपनी) आत्मा को" तो कभी "समयं गोयम! मा पमायए" — पलभर का भी प्रमाद मत कर, हे गौतम!" कहकर उनकी प्रमाद की नींद उड़ाते थे प्रभु!

(प्र.m) — ऐसे प्रभु वीर की ही प्रशस्त, अनन्य भक्ति में लीन गौतम-स्वामी को केवलज्ञान न हो? उस की चिंता प्रभु को थी!

जो उनकी चिंता के कारणरूप, अपने प्रति जो स्नेह-राग था उसे तोड़ने प्रभुने उन्हें अंतिम समय अपने पास नहीं रहने दिया। देवशर्मा ब्राह्मण को प्रतिबोध देने भेजा और...

(प्र.F) ....और इस प्रकार प्रभु द्वारा प्रतिबोध कार्य को प्रेषित गणधर गौतम स्वामी प्रभु की मुक्ति के बाद जब लौटे, तब यह (निर्वाण-वार्ता) जानकर मोह-राग वश टूट पड़े और फूट फूट कर रो उठे —

(शोकगान: m : करुणतम विलाप-स्वर: गम्भीर ध्वनि)

" आप प्रभु निर्वाण गये, रहत नहीं अब धीर हिया।
मुझे अकेला छोड़ गये, अब कौन जलाये आत्म-दिया? "

गौतमविलाप

(प्र.m. गौतम-वेदना वाणी: विरह-व्यथा Deeply pathetic rendering with Instr BG)

" हे प्रभु! अब मैं किन के पावन चरणों में बैठकर प्रश्न पूछुंगा?.... किन्हें 'प्रभु! भगवंत!' कहकर पुकारूंगा?... हे प्रभु! अब मुझे कौन 'गौतम!' ऐसी आत्मीय वत्सल-वाणी में बुलायेगा? हा....हा....हा....हा... वीर प्रभु! आपने यह क्या किया? ... अहो! आपके निर्वाण के समय आपने मुझे दूर किया?.... क्या मैं हठ करके बालवत् यदि आपके साथ आता तो आपकी वह मुक्ति क्या संकीर्ण बन जाती?... या वहाँ ले जाने में मैं आपके लिये बोझरूप बनता?.... आपने क्या सोचकर मुझे यहाँ से दूर किया....? हे प्रभु!.... वीर..... वीर..... वीर.... !! " (श्री कल्पसूत्र)

भन्ते

(प्र.F) — इस प्रकार महाविलाप करते हुए प्रशस्त-रागी / प्रशस्त भक्त गौतम के मुख में केवल 'वीर' शब्द रह गया और वे सम्यक् विचार में — स्वात्मचिंतन में चढ़े.....

(पार्श्वगान m) " शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम।
बीजुं कहीए केटलुं? कर विचार तो पाम॥ " (आ.सि.117)
(और कहें क्या, कितना? ध्यान लगाय निजधाम!)

(प्र.F) — और रोते हुए विरही गौतम को (तब) यकायक स्मृति में भीतर सुनाई दी भगवन्त की वह अप्रमत्त-आज्ञा :—

(सूत्रघोषणा) "समयं गोयम मा पमायए।" = पलभर का भी प्रमाद मत कर, हे गौतम!" (Echoes)

(प्र.F) इसे सुन, आर्त्तध्यान त्याग कर, गहन आत्मचिंतन के द्वारा वे आत्म-श्रेणि पर चढ़ने लगे :-

(घोषसह प्र. M) (Instrumental celestial Music)

" हँ.... हँ...... जाना जाना... कि सचमुच, वीतराग निःस्नेह होते है...... मेरा ही अपराध कि मैंने श्रुत का उपयोग नहीं रखा..... धिक् मेरे इस एकपक्षीय स्नेहराग को... बस हुआ इस स्नेह से।.... मैं अकेला हूँ, मेरा कुछ भी नहीं, कोई भी नहीं....

(घोष प्रतिध्वनि) .... एगोऽहम् नत्थि मे कोई, एगोऽहम् नत्थि मे कोई, एगोऽहम्....

(प्र.F) – इस 'एकत्व भावना'-युक्त गहन आत्मचिंतन-श्रेणि के चरम पर चढ़ते चढ़ते छूटे वे प्रमादपूर्ण आर्त्तध्यान से, पहुँचे आत्मभावना द्वारा आत्मध्यान – शुद्धात्मध्यान (के शैल शिखर पर) में और तुरन्त ही हुआ उन्हें केवलज्ञान! (Sooomandal)

(वृन्दगीत: धुन) ० " भाते आतमभावना, जीव पावे केवलज्ञान रे " (२) (आ.सि.)

० " आतम भावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे... (२) "

० " वीर प्रभु को हुआ निर्वाण, गौतम स्वामी केवल... । (२) "

(प्र. M) वीरप्रभु की विद्यमानता में नहीं, निर्वाण के बाद हुआ उन्हें केवलज्ञान! वास्तव में विषाद, राग और अहंकार हानिकर्ता है, परंतु गौतमस्वामी की तो यह कैसी आश्चर्यभरी भवितव्यता कि उन्हें अहंकार धर्मबोध-प्राप्ति का हेतु बना, राग (प्रशस्त राग) गुरुभक्ति का कारण बना और विषाद केवलज्ञान का निमित्त!

(निमित्त)

(सूत्रगान)

"अहंकारोऽपि बोधाय, रागोऽपि गुरुभक्तये।
विषादः केवलायाभूत्, चित्रं श्री गौतमप्रभोः।"

(आत्मचिंतन पार्श्वधुन) "आतम भावना भावतां, जीव लहे केवलज्ञान रे"

" शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम;
बीजुं कहिये केटलुं, कर विचार तो पाम!"

(New Rising Music) * * * * * (Instrumental BGM)

(प्र. M) आज पच्चीस सौ वर्षों के पश्चात् (विहगवृंद ध्वनि : प्रभात संकेत ...) आती है उस चिर महान आत्मा की – भगवान महावीर की यह आवाज़:

(सूत्रघोष) "मित्ती मे सव्व भूएसु, वैरं मज्झं न केणई।" (सबसे मेरी मैत्री, वैर नहीं किसीसे)

(गान) "शिवमस्तु सर्वजगतः परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु नाशम्, सर्वत्र सुखी भवन्तु लोकाः॥"

(सर्व विश्वजीव सर्वत्र सर्वथा सुखी हों, अन्यों के उपकारक हों, सर्व जीवों के दोष नष्ट हों)

(प्र. M) आज गूँजती है — तीर्थंकर भगवंत महावीर के मंगलदर्शन की वह "वर्धमान भारती", वह जग-कल्याणी वाणी ('जिनभारती') —

(प्र. F) — जम्बू-नन्दीश्वर के द्वीपों से, भरत-महाविदेह के क्षेत्रों से और मेरु-अष्टापद-हिमालय की चोटियों से —

(सूत्र (घोष M)) " जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ ।" (वाद्य Instt. Effect)

" जो एक को, आत्मा को जान लेता है, वह सब को, सारे जगत को जान लेता है ।"

- वीरस्तुति -

(श्लोकगान : भैरवी) "वीरः सर्व सुरासुरेन्द्र महितो, वीरं बुधा संश्रिताः ।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्यं नमः ॥
वीरात् तीर्थमिदं प्रवृत्त मतुलं, वीरस्य घोरं तपो ।
वीरे श्री, धृति, कीर्ति, कान्ति निचयः । श्री वीर भद्रं दिश ॥"

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥

- परिशिष्ट -

अनुपम महावीर वचन : " महावीर का एक समय मात्र भी संसार का उपदिष्ट नहीं है । उनके सारे प्रवचनों में उन्होंने वही प्रदर्शित किया है, वैसे ही स्वाचरण से भी उस प्रकार सिद्ध भी कर दिया है । कंचनवर्णी काया, यशोदा जैसी राणी, विपुल साम्राज्यलक्ष्मी और महा प्रतापी स्वजन परिवार का समूह फिर भी उसकी मोहिनी को उतार देकर ज्ञानदर्शनयोगपरायण होकर उन्होंने जो अद्भुतता दर्शित की है, वह अनुपम है । उसका वही रहस्य प्रकाशित करते हुए पवित्र 'उत्तराध्ययन सूत्र' में आठवें अध्ययन की प्रथम गाथा में कपिल केवली के समीप तत्त्वाभिलाषी के मुखकमल से महावीर कहलवाते हैं कि —

'अधुवे असासयंमि संसारंमि दुक्खपउराए ।
किं नाम हुज्ज कम्मं जेणाहं दुग्गई न गच्छिज्जा ॥'

'अध्रुव और अशाश्वत संसार में अनेक प्रकार के दुःख हैं, मैं ऐसी क्या करनी करूँ कि जिस करनी से दुर्गति प्रति जाउं नहीं ?'"

" xxx तत्त्वज्ञानचंद्र की सोलह कलाओं से पूर्ण होने के कारण से सर्वज्ञ महावीर के वचन तत्त्वज्ञान के लिये जो प्रमाण देते हैं वह महद्भुत, सर्वमान्य एवं केवल मंगलमय है ।" — श्रीमद् राजचन्द्र : भावनाबोध (१९८)

JINA BHARATI (E-mail : pratapkumartolya@gmail.com)
Vardhaman Bharati Intl. Foundation
Prabhat Complex, K. G. Rd, Bangalore-9
1580, Kumaraswamy Lyt, Bangalore-78 PIN-560078
Ph: 080-2251552/26667882)

समाप्त